अनुक्रमणिका

विषय-सूची	पृष्ठ- संख्या
१.श्रीमाताजी गौशाला' में निर्माणाधीन गौ-चिकित्सालय	०२
२. श्रीहरिनाम से ही वास्तविक ब्रजोद्धार	०५
३. ब्रज के अर्चावतारों के चमत्कार	१०
४. ब्रज व निकुञ्ज में किया भेद	१४
५. कहाँ है ब्रज व निकुञ्ज में भेद ?	१९
६. रस-मत्तता के धोखे में अपराध	२१
७. कैसे बचें भक्तापराध से ?	२३
८. अनन्यता	२५
९. भागवत धर्म में सर्वाधिकार	२७
१०. स्त्री को कथा-वाचन का अधिकार	३१

ब्रज में फिर प्रेम भरी प्यारी, मुरली की तान सुना देना |
बलराम कृष्ण दोनूँ भैया, मधुर दरस दिखला देना ||
फिर घर घर में मंगल होवे,
फिर दूध दही नदिया बहवे,
फिर प्रेम रूप माखन खाकर, तुम माखन चोर कहा लेना |
वंशी की जादू की तानन,
सुन गोपी तोड़ें जग बंधन,
फिर चरनन घुँघरू घोर बजें, यमुना तट रास रचा लेना |
फिर ब्रज की प्यारी बने छटा,
नित ही बरसे फिर श्याम घटा,
यह आस हमारी है नटवर, तुम हमको दरस दिखा देना ||
– पूज्यश्री बाबा महाराज कृत

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो |
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो |
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो |

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,
गह्वरवन बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)
(Website :www.maanmandir.org)
(E-mail :ms@maanmandir.org)
mob. : 9927338666, 9837679558

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले |"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकाले व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवा द्रव्य किसी विश्वसनीय गौ सेवा प्रकल्प को दान कर गौ-रक्षा कार्य में सहभागी बन अनंत पुण्य का लाभ लें | हिन्दू शास्त्रों में अंश मात्र गौ

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८:०० से ९:०० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

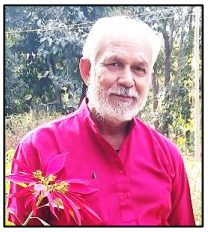

प्रकाशकीय

ब्रजभूमि व गौवंश के संरक्षण-संवर्द्धन से ही देश व विश्व की वास्तविक रक्षा होगी | गौ-खिरक को ही ब्रज कहा गया, ब्रज का एक नाम गोकुल भी है, इस गोकुल ने ही कन्हैया को गोपाल बनाया, गोविन्द बनाया। गौ-चर्चा ही ब्रज-चर्चा का पूरक है | जहाँ गौवंश है, वहीं ब्रज है –**"व्रजन्ति गावो यस्मिन् स व्रजः ।"**

भूमि के सप्त आधार स्तम्भों में प्रथम स्तम्भ गौमाता पर प्रथम प्रहार किया था कलियुग ने, उस कलियुग का दमन तो कर दिया श्रीपरीक्षितजी ने किन्तु अब कलियुग के अनेकों बाप-दादा आ गए हैं, जो इस आधार स्तम्भ को विदीर्ण करने के लिए निर्ममता से अघ्न्या (अवध्या) गौमाता का वंदन के स्थान पर हनन कर रहे हैं, ये भारतमाता की सबसे दुःखद पीड़ा है, जिसे सुदूर करने के लिए हम सभी लागों का अथक प्रयास होना चाहिए |

द्वापरकाल में श्रीकृष्णावतार से न केवल भारत की प्रत्युत सम्पूर्ण विश्व की रक्षा हुई थी। ब्रजगोपियाँ कहती हैं –

व्रजवनौकसां व्यक्तिरङ्ग ते वृजिनहन्त्र्यलं विश्वमङ्गलम् ।
त्यज मनाक् च नस्त्वत्स्पृहात्मनां स्वजनहृद्रुजां यन्निषूदनम् ॥ (श्रीमद्भागवतजी १०/३१/१८)

कृष्ण ! तुम्हारे आने से विश्व मंगल हुआ। कैसे? तुमने गौ-सेवा की। गोपालक ही गोपाल का बालक है। सम्पूर्ण संसार जानता है कि गवामृत से शुद्ध बुद्धि, पवित्र चरित्र का निर्माण होता है। बुद्धि यदि शुद्ध है तो राग-द्वेष, कलह-विषाद स्वतः संसार से नष्ट हो जाए, प्रेम का संचार हो जाए। यदि आज अनाद्या अवध्या गौ का वध बंद हो जाए तो भारतवर्ष सशक्त व स्वराट् बन जाए। गो-गोपाल के सेवक का कदापि कोई अभद्र नहीं हो सकता है।

परम गौभक्त श्रीगोपालजी का प्राणप्यारा 'ब्रज' जगद्गुरु है, जो सम्पूर्ण विश्व को 'सच्ची सेवाराधना' की शिक्षा देता है। माधुर्यमयी लीलाओं से अभिसिंचित ब्रजभूमि में प्राकृतिक 'राग-द्वेष' नहीं हैं –

यत्र नैसर्गदुर्वैराः सहासन् नृमृगादयः ।
मित्राणीवाजितावासद्रुतरूट्तर्षकादिकम् ॥ (श्रीमद्भागवतजी १०/१३/६०)

नैसर्गिक-दुर्वैर प्राणी जैसे – सिंह-हिरण, सर्प-नेवला, बाज-कबूतर आदि वन्य पशु-पक्षी एवं मनुष्य जिनका परस्पर नैसर्गिक बैर है, यह उस दिव्य ब्रज-वृन्दावन में नहीं है क्योंकि प्रभु के नित्य धाम में "अजितावास द्रुतरूट्" रूट् माने क्रोध, तर्षा माने प्यास (राग) नहीं है, जहाँ राग-द्वेष नहीं है, वही है 'वास्तविक ब्रज'।

श्रीधाम में रहकर उपासना कैसे हो और साधुता का वास्तविक स्वरूप क्या है ? सुधानिधिकार ने इसका बड़ा उत्तम उत्तर दिया है - **ये क्रूरा अपि पापिनो न च सतां सम्भाष्यदृश्याश्च ये ।**
सर्वान् वस्तुतया निरीक्ष्य परमस्वाराध्यबुद्धिर्मम ॥ (श्रीराधासुधानिधि - २६४)

जो अत्यन्त क्रूर हैं, पापी हैं, असम्भाष्य हैं, असंदृश्य हैं (देखने व बात करने योग्य भी नहीं है); ऐसे लोगों में भी परम स्वाराध्य बुद्धि रखकर ही ब्रजोपासना करनी होगी क्योंकि ब्रज का कण-कण राधाकृष्णमय, हमारा इष्ट है, अतः अपराधों से बचकर सतत् सावधानीपूर्वक श्रीकृष्णाराधना करने से ही 'सच्ची ब्रजोपासना' होगी, इसलिए श्रीयुगलसरकार से प्रार्थना करते हैं कि हम लोगों को शक्ति दें, जिससे हम सब 'ब्रज के वास्तविक स्वरूप' को बनायें, इसकी सुन्दरता-मधुरता का पारस्परिक राग-द्वेष से नाश न करें; श्रीजी हम सबको द्वन्द्व रहित बनाकर सच्ची आराधना करायें, यही याचना है।

प्रबंधक
राधाकांत शास्त्री
श्रीमान मन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

श्रीमान मन्दिर सेवा संस्थान द्वारा संचालित 'श्रीमाताजी गौशाला' में निर्माणाधीन अत्याधुनिक श्री श्याम लक्ष्मी गौ-चिकित्सालय (प्रथम चरण) का निर्माण कार्य प्रगति पर

भूमिका – अज्ञान के कारण भारत में गौधन की वर्तमान स्थिति बहुत ही दुर्दय है | गौवंश सड़कों और खुले स्थानों पर भोजन और आश्रय से विहीन अवस्था में दिखना अब एक साधारण-सी बात है | गौवंश सड़कों पर दुर्घटना में घायल होकर, कचरे के ढेरों में भोजन ढूँढ़ने के लिए मजबूर होकर प्लास्टिक को निगलने एवं गंभीर बीमारियों के इलाज के अभाव में बड़ी संख्या में मर रही है | गौवंश न केवल किसानों के लिए लाभदायी अपितु देश की आर्थिक व्यवस्था का भी हिस्सा है |

गौवंश की दुर्दशा में सुधार के लिए और गौरक्षा के लिए **पद्मश्री परम पूज्य श्रीरमेशबाबाजी महाराज** द्वारा **मानमंदिर, गह्वरवन, बरसाना** स्थित उत्तरप्रदेश की विशालतम '**श्रीमाताजी गौशाला**' (जहाँ ५५००० से भी अधिक गौवंश का मातृवत् पोषण हो रहा है) की स्थापना हुई है | एक कदम आगे की ओर बढ़ाते हुए अथक प्रयासों द्वारा निर्मित गौसेवा, गौरक्षा व चिकित्सा हेतु एक विशाल एवं आधुनिक 'गौ-चिकित्सालय' एवं 'अनुसंधान केंद्र' कोलकत्ता के प्रसिद्ध समाजसेवी एवं उद्योगपति संत चरणानुरागी श्री महावीर प्रसाद अग्रवाल के निष्काम सहयोग से विकसित हो रहा है |

श्री श्याम लक्ष्मी गौ-चिकित्सालय एवं अनुसंधान केन्द्र

यह चिकित्सालय कई मायनों में अपने आप में अनूठा व अपने तरह का पहला 'गौ-चिकित्सालय' है | इसमें एक समय में ३००० गौवंश की अत्याधुनिक मशीनों व विविध चिकत्सा पद्धतियों द्वारा इलाज हो सकता है एवं २५ एम्बुलेंस, ५ आधुनिक ऑपरेशन थिएटर, आई.सी.यु, हाइड्रो थेरपी आदि सुविधायें २४ घंटे उपलब्ध रहेंगी व निकट भविष्य में नस्ल सुधार केंद्र, विशिष्ट अनुसंधान केंद्र, उन्नत गौ विश्वविद्यालय आदि का भी निर्माण किया जाएगा।

गायों के लिए चिकित्सालय की आवश्यकता क्यों ?

वर्तमानकाल में भारतीयजनों की जीवन-शैली में समय का अभाव, प्रदूषण, स्वछता में कमी, भोजन में गुणवत्ता का अभाव और स्वस्थ जीवन में गिरावट बड़ी तेजी से हो रही है | आज भारतीय अपनी संस्कृति व आदर्शों को छोड़कर पश्चिम की संस्कृति की ओर उन्मुख हो रहा है, औद्योगीकरण और तकनीक को अपनी जीवन-शैली में उतार लिया है; ऐसे में साधारण व्यक्ति का गौवंश के प्रति जागरूक होने का अभाव प्रस्तुत हो रहा है | यह केवल शहरों और नगरों की परिस्थितियाँ नहीं हैं अपितु गाँवों में जहाँ गौवंश आर्थिक दृष्टि से भी बहुत महत्त्वपूर्ण है, वहाँ भी गौवंश के स्वास्थ्य व संवर्द्धन पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है |

गौवंश बहुत पीड़ित अवस्था में है : गौपालक गायों को दूध देने के समय के उपरान्त उनके रख-रखाव में होने वाले खर्चे से बचने के लिए उन्हें खुला छोड़ देते हैं, जहाँ वह दुर्घटना का शिकार बनती है |

- बूढ़ी और बीमार गायों को निकाल देना |
- गौवंश का प्लास्टिक को भोजन समझ कर खाना |
- कूड़े के ढेर में भोजन ढूँढ़ना जिससे अनगिनत बीमारियों का स्वत: ही आमंत्रण होता है |
- भोजन की तलाश में खेतों में चले जाना, वहाँ खेत के स्वामियों द्वारा पीड़ित करना जैसे कि मारना, एसिड डाल देना आदि |
- चारा न मिलने पर बहुत दिनों तक भूखा रहना |
- रख-रखाव को अधिक महत्त्व न देना |
- मौसम की बीमारियों में सही उपचार न मिल पाना |

ऐसे में गौवंश के लिए चिकित्सालय की आवश्यकता है, जहाँ पर गौवंश को उत्तम चिकित्सा प्राप्त हो सके | गौवंश की सुरक्षा, चिकित्सा एवं गौवंश पर अनुसंधान कार्य के लिए, **श्रीमाताजी गौवंश संस्थान द्वारा "श्री श्याम लक्ष्मी हॉस्पिटल एंड रिसर्च सेंटर"** विकसित किया गया है, जिसमें विशेष चिकित्सा और नर्सिंग स्टाफ के साथ उत्तम एवं आधुनिक उपकरणों के द्वारा गौवंश की चिकित्सा उपलब्ध है।

चिकित्सालय के प्रथम चरण में उपलब्ध सुविधाएँ

- 'चिकित्सालय-भवन' जिसका क्षेत्रफल २८,००० घनफुट है, जिसमें ३२ कमरे हैं |
- ऑपरेशन के बाद पूर्णरूप से स्वस्थ होने तक रहने के लिए 3 शेड (लगभग 60000 घनफुट) |
- ४ ऑपरेशन थिएटर पूर्ण रूप से निर्मित |
- एक ऑपरेशन थिएटर में प्रतिदिन लगभग ३-५ ऑपरेशन हो सकते हैं |
- पशु चिकित्सक : 2 PG, 5 VO, 20 – LSA
- लगभग १०० गौ-सेवक चिकित्सालय में गौ-सेवा के लिए उपस्थित |
- चिकित्सकों एवं गौ-सेवकों के लिए चिकित्सालय के निकट ही स्टाफ |
- आग और दुर्घटनाग्रसित जैसी आपातकालीन गायों के लिए आपातकालीन विभाग |
- गहन देखभाल के लिए विभाग |
- बीमार गाय के लिए अतिरिक्त स्थान है, जिन्हें दीर्घकालिक देखभाल की आवश्यकता है। इसमें ट्रॉमा सेंटर, पुनर्वास-केंद्र, बछड़ा-संचालन और प्रबंधन-विभाग, सर्जन-विभाग और विशिष्ट चिकित्सा की आवश्यकताओं के लिए विभाग |

श्रीहरिनाम से ही वास्तविक ब्रजोद्धार

श्रीबाबामहाराज के 'ब्रजसीमायात्रा-सत्संग' (२९/१०/२००७) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- बालसाध्वी गौरीजी, मानमन्दिर, बरसाना

श्रीबाबामहाराज के शब्दों में –

सीमांत ब्रज में हमारी ब्रजयात्रा पहली बार आई है और यहाँ आने का उद्देश्य विशेष है | इधर ब्रज के समस्त स्थल, लीलाभूमियाँ लुप्त हो गई हैं | इसका कारण यही था कि सीमांत ब्रज में मेवात (मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र) का प्रभाव बहुत बढ़ा, यह तो पहला कारण था, दूसरा कारण यह था कि हम लोगों की भी भूल थी | ब्रजपरिक्रमा करने वालों ने संकीर्णवाद अपना लिया | वे लोग ब्रज की सीमा को लेकर सिकुड़ते चले गये और इसीलिए सीमावर्ती ब्रज में ब्रजयात्राओं का आना रुक गया | केवल ब्रजवासी लोग ही पुरुषोत्तम मास में सीमांत ब्रज से होते हुए ब्रज की परिक्रमा करते हैं, बाकी जो वैष्णव सम्प्रदायों के द्वारा ब्रज-परिक्रमा की जाती थी, वे तो संकीर्णता में सिकुड़ते चले गये और जो उन सम्प्रदायों में शिष्य-प्रशिष्य होते गये, उनमें विचार-शक्ति नहीं रही कि इस संकीर्णता का परिणाम होगा 'सामाजिक-धार्मिक क्षति' | जब मैंने सीमा- यात्रा का कार्यक्रम बनाया तो कुछ लोगों ने मेरा भी विरोध किया और कहा कि आप यात्रा को ब्रज के बाहर ले जा रहे हैं | इस प्रकार उत्साह गिराने की बातें लोगों ने कहीं किन्तु मेरे विचारों को वे लोग बदल नहीं सके क्योंकि मैं शास्त्र प्रमाण को मानता हूँ और मैं जानता हूँ कि बाकी जो लोग हैं वे शास्त्रज्ञ भी नहीं हैं तथा उन्हें 'सामाजिक-क्षति' का ध्यान भी नहीं है, वे तो संकीर्णवाद में फँसे हुए हैं | ब्रज की सीमा कहाँ तक है, इसका वर्णन गर्गसंहिता, ब्रह्माण्ड- पुराण आदि कृष्णभक्ति के प्रामाणिक आर्ष ग्रन्थों में किया गया है | शास्त्रों का अध्ययन करने के बाद मैंने वृन्दावन के प्राचीन रसिकों की वाणी का भी अध्ययन किया तो राधावल्लभ सम्प्रदाय के प्रसिद्ध रसिकाचार्य चाचा वृन्दावनदासजी की 'ब्रजपरिक्रमा' नामक पुस्तक भी मुझे प्राप्त हुई, जिसमें उन्होंने पदों के माध्यम से सीमांत ब्रज के बहुत से गाँवों का उल्लेख किया है; इन सब पुस्तकों को पढ़ने के बाद मालूम हुआ कि वैष्णव-सम्प्रदायों की ब्रजपरिक्रमायें संकीर्णता के कारण सिकुड़ती चली गई | उदाहरण के तौर पर वल्लभसम्प्रदाय की यात्रा केवल उन्हीं स्थलों पर जाती है, जहाँ पर महाप्रभु वल्लभाचार्यजी की बैठकें हैं, उससे आगे ब्रज कहाँ तक है, इससे उनको कोई मतलब नहीं है, इसके बारे में वे लोग कुछ भी सोचते-समझते नहीं हैं | इसी प्रकार गौड़ीय संप्रदाय की यात्रा भी उन्हीं स्थलों पर जाती है, जहाँ चैतन्यमहाप्रभुजी गये थे और जहाँ श्रीरूप-सनातन आदि षड् गोस्वामियों ने निवासकर भजन किया था | इस प्रकार विभिन्न वैष्णव-सम्प्रदायों के गुरुजन ब्रज के बारे में जो कुछ भी कहते गये, उनके शिष्यगण नेत्र मूँदकर उनकी बातों को मानते चले गये, चाहे उनकी बात शास्त्र सम्मत है या नहीं, इससे उनको कोई मतलब नहीं है | इसीलिए इस सांप्रदायिक संकीर्णता के कारण ही ब्रज-परिक्रमायें सिकुड़ती गयीं, 'सीमांत ब्रज' की उपेक्षा करने लगीं और यह सम्पूर्ण क्षेत्र ब्रज से अलग एक पृथक क्षेत्र होता गया तथा इससे बहुत बड़ा नुकसान हुआ | सीमांत ब्रज के सारे तीर्थ ही लुप्त हो गये जबकि यहाँ का प्रत्येक गाँव लीलास्थल है | साम्प्रदायिक संकीर्णता के कारण सीमान्त ब्रज की बहुत बड़ी क्षति हुई, जिसको सोचने वाला भी इस समय कोई नहीं है | मैं बरसाना में रहता हूँ लेकिन गोवर्द्धन, नंदगाँव, वृन्दावन में आने वाली ब्रजयात्राओं को देखता रहता हूँ और उसको चलाने वाले संचालकों के विचारों को भी सुनता हूँ | उन लोगों को सम्पूर्ण ब्रज के बारे में कोई ज्ञान ही नहीं है और उनके अन्दर ऐसे संस्कार पड़ गए हैं कि सीमान्त का क्षेत्र ब्रज के बाहर है | इस प्रकार

'सीमान्त-ब्रज' की उपेक्षा का एक कारण यह भी था कि साम्प्रदायिक लोगों ने इसकी अवहेलना कर दी | संकीर्णवाद इतना अधिक फैला कि इससे ब्रज की बहुत अधिक क्षति हुई | ये हमलोगों की बहुत बड़ी भूल है इसी भूल को सुधारने के लिए हमने सीमायात्रा प्रारम्भ की जिससे कि सीमावर्ती गाँवों के लोगों में ब्रज के संस्कार डाले जाएँ | जब हमलोग 'जुरैहरा' गाँव में पहुँचे और वहाँ के लोगों से मैंने वहाँ का इतिहास पूछा तो वे लोग ठीक से बता नहीं सके | मैंने उन लोगों से कहा कि आपलोग ब्रजवासी हैं किन्तु केवल खाने-कमाने में ही व्यस्त हैं | आपलोग एक ऐसा संगठन बनाइए जिससे कि आपके गाँवों की लीलास्थलियों की रक्षा हो सके | इसे आपलोग नहीं करेंगे तो और कौन करेगा ? कोई राजनैतिक पार्टी या कोई भी संगठन ब्रज के तीर्थों, लीलास्थलियों की रक्षा के बारे में कुछ नहीं कर रहा है और वास्तव में उन्हें ब्रज का कोई ज्ञान भी नहीं है, यथार्थ स्थिति है | अकारण ही लोग मेरा विरोध किया करते हैं, जैसे कि मैंने ब्रज के कुण्डों के संरक्षण का कार्य शुरू किया तो बहुत से लोगों ने इसका विरोध किया | उदाहरण के तौर पर जब कोसी में गोमती गंगा का जीर्णोद्धार किया गया तो बहुत से मंत्रियों ने हमारा विरोध किया | जबकि इस समय देश में जल-स्तर तेजी से गिर रहा है, अतः पर्यावरण की दृष्टि से भी कुण्डों का संरक्षण आवश्यक है किन्तु कोई मेरे ब्रजसेवा के कार्यों में सहयोग नहीं करता है | यमुनाजी के संरक्षण के बारे में भी लोग हमारा विरोध करते हैं | जब हमने ब्रज के पर्वतों की रक्षा का आन्दोलन शुरू किया तो क्रेशर वाले मुझसे नाराज हो गए और बोले कि आप उद्योग-धंधा समाप्त करना चाहते हैं | मैं उद्योग क्यों समाप्त करूँगा, मैं तो उद्योग को बढ़ाता हूँ, मैं तो खनन करने वालों से यह कहता हूँ कि तुम लोग ब्रज की सीमा से आगे जाकर खनन करो, इससे तुमको ब्रजरक्षा का पुण्य मिलेगा | इस प्रकार मैं तो इनके कल्याण की बात करता हूँ क्योंकि तीर्थों को नष्ट करने का पाप भी तो इन्हें भोगना पड़ेगा | मैं इन लोगों से ईर्ष्या नहीं करता हूँ किन्तु फिर भी मुझे बदनाम किया जाता है, यहाँ तक कि कई बार मेरे ऊपर और मानमंदिर के सदस्यों पर हमले किये गए, कई झगड़े भी हुए | ये लोग ब्रज के पर्वतों की महिमा नहीं समझते हैं जबकि श्रीमद्भागवत में लिखा है कि इन पर्वतों पर श्रीकृष्ण की गायें चरती थीं | मैं चाहता हूँ कि ये ब्रज के पर्वत हरी-भरी गोचर भूमि बन जाए क्योंकि आजकल समस्या ये है कि गायों के लिए कहीं भी गोचर भूमि नहीं रह गयी है | यदि ब्रज के पर्वतों को गोचर भूमि के रूप में स्थापित किया जाए तो गायों की समस्या हल हो जाएगी | हमलोगों ने बरसाने के निकट मानपुर और डभारा गाँवों के पर्वतों पर सैकड़ों गड्ढे खुदवाए, बाहर से इस कार्य के लिए तकनीशियन बुलाये | हमारा उद्देश्य यही था कि इन पर्वतों पर वृक्ष लगाये जाएँ, घास उगायी जाये जिससे कि हजारों गायें यहाँ चरेंगी और उनसे प्रचुर मात्रा में दूध उत्पन्न होगा, ब्रज में दुग्ध-क्रांति होगी, यहाँ का पर्यावरण सुधरेगा | जब लालूजी केंद्र-सरकार में मंत्री थे तो वह बरसाना आये थे, मुझसे मिले तो मैंने उनसे कहा कि यदि सरकार मुझे अवसर दे तो दो साल में मैं ब्रज के पर्वतों को गोचर भूमि बनाकर न दिखा दूँ तो जो चाहे दंड मुझे देना | सारे संसार के लिए यह एक आदर्श नमूना होगा | हमें ब्रज के कार्यों में सहयोग के लिए किसी से धन की आवश्यकता नहीं है | ब्रज में मानमन्दिर द्वारा ४०-४० लाख के कुण्ड बनाये गये किन्तु हम लोगों ने किसी से पैसा नहीं माँगा | मैं इतना जानता हूँ कि भगवान् का नाम कल्पतरु है और वह सब कार्य पूरा करता है | अभी तक हमारे जितने भी कार्य थे, सब प्रभु ने पूर्ण किये | कोई यह नहीं कह सकता कि किसी के दरवाजे हम दान माँगने के लिए गये | ब्रज के सेवा-कार्यों में किसी भी दिशा से हमें सहयोग नहीं मिलता है, यह हिन्दू-जगत की दशा है किन्तु फिर भी हमलोग आगे बढ़ रहे हैं | उसी दिशा में एक कदम हमारा ये भी है कि हम मेवात-क्षेत्र में ब्रजयात्रा लेकर आये | मुझसे लोगों ने बहुत कहा कि आपकी यात्रा लुट जाएगी क्योंकि पहले कभी

कोई यात्रा इधर आई थी तो कुछ यात्री लुट चुके हैं | इसलिए आप मेवात क्षेत्र में यात्रा लेकर मत जाइये | इस प्रकार यहाँ आने में बहुत तरह से लोगों ने हमें भय दिखाया | मैंने कहा कि कोई काम डरने से तो होता नहीं है | मुझे पता है कि 'सीमांत ब्रज' के सभी लीलास्थल नष्ट हो रहे हैं, इसलिए उनकी सुरक्षा की दृष्टि से इस क्षेत्र में यात्रा ले जाना बहुत आवश्यक है और डर के कारण हम बैठे रहें तो मरना एक दिन सभी को है, इस दुनिया में अमर तो कोई नहीं है | जो हमें मारेगा, एक दिन वह भी तो मरेगा | अब मरने के भय से हम सीमांत ब्रज में यात्रा ही न ले जाएँ, ये तो कोई बात नहीं हुई | पुन्हाना के लोगों को अपने इतिहास का ज्ञान नहीं है कि यहाँ क्या लीला हुई है और पुन्हाना का वास्तविक नाम क्या है ? इस क्षेत्र में हम यात्रा लेकर इसीलिए आये हैं ताकि यहाँ के लोगों को अपने स्थलों के माहात्म्य का ज्ञान हो कि हमारे यहाँ क्या लीला हुई है ? ब्रज की महिमा गाते सब हैं, वृन्दावन के रसिक भी गाते हैं किन्तु वे संकीर्णवाद में फँस गये हैं | आजकल वृन्दावन में बहुत से रसिक तो ऐसे हो गये हैं जो पाँच कोस के वृन्दावन को छोड़कर बरसाना, नंदगाँव भी नहीं आते हैं जबकि प्राचीन रसिकों जैसे विहारिनदेवजी, हित हरिवंशजी आदि ने भी ब्रज की महिमा को गया है |

महावाणी में 'उत्साह सुख' में लिखा है –

"श्रीहरिप्रिया प्रगट पुहुमी पर कहत होत मति पंगु |"

पृथ्वी पर वह धाम (ब्रज) अवतरित हुआ, जिसकी महिमा कहने में हमारी बुद्धि पंगु हो गयी है, चल नहीं सकती |

इतनी अधिक ब्रज की महिमा है लेकिन यह सब बातें कोई सोचता नहीं है | संकीर्णवाद का एक ढर्रा चल पड़ा है कि हमने जो कहा, बस वही सत्य है, इसके आगे कोई सोचता ही नहीं है | सतवास हम गये तो वहाँ के लोगों को वहाँ की महिमा का कुछ ज्ञान नहीं है, जुरहरा वालों को भी अपने क्षेत्र की महिमा का कोई पता नहीं है, पुन्हाना वालों का भी यही हाल है | पुन्हाना के निकटवर्ती सभी लीलास्थल गायब हो चुके हैं | पुन्हाना के पास प्रसिद्ध लीलास्थल है - तिलकवन (तिरवारा) किन्तु अब वहाँ कोई प्राचीन चिन्ह नहीं रह गया है | तिरवारा का सम्बन्ध पुन्हाना से है | ब्रज की लीलास्थलियों के महत्त्व को प्रमुखता के साथ उद्घाटित करने वाला ग्रन्थ है –"ब्रजभक्तिविलास" | इसमें तिरवारा के बारे में लिखा है कि यहाँ राधा-माधव के लीलाकाल में स्वर्ग से मृगावती नामक अप्सरा आई थी, उसने यहाँ राधा-माधव का श्रृंगार किया था | श्रीकृष्ण के विरह में जो गोपियाँ उनका अन्वेषण कर रही थीं, मृगावती ने यहाँ उन सबका भी श्रृंगार किया तथा तिलक नाम के उसने बहुत से वृक्ष भी वहाँ लगाये, जिससे उस वन का नाम 'तिलकवन' हो गया, उस स्थान पर हम यात्रा इसलिए नहीं ले गये क्योंकि लोगों ने बताया कि वहाँ अब कोई हिन्दुओं का घर नहीं है और वहाँ के मन्दिर पर भी मुसलमानों का कब्ज़ा हो गया है | ऐसी स्थिति में हमें सफलता मिलना तो श्रीजी के हाथों में है क्योंकि सारी जनता को जाग्रत करना तो एक बहुत कठिन कार्य है, मैं अकेला इस काम को कैसे कर सकता हूँ, अकेला चना भाड़ कैसे फोड़ सकता है ? हमारी यात्रा के सभी यात्री तो यात्रा-समाप्ति के बाद अपने घर चले जायेंगे | स्थानीय जनता के अंदर चेतना तो प्रभु ही पैदा कर सकते हैं, मैं तो इतना बड़ा नहीं हूँ कि एक फूँक मार दूँ और जनता जाग जाए और इन लीलास्थलों के बारे में सोचने लग जाए किन्तु सीमायात्रा चलाने का मेरा उद्देश्य यही है | अगर 'सीमांत ब्रज' के गाँवों की रक्षा मैं नहीं कर पाया तो इतना तो कर ही रहा हूँ कि मानमन्दिर द्वारा सम्पूर्ण ब्रज में कीर्तन की फेरियों को चलाने का अभियान चलाया जा रहा है | हजारों गाँवों में प्रभात फेरियाँ शुरू की गई हैं, इसके द्वारा लोगों में चेतना फ़ैल चुकी है | हमारी यात्रा से ब्रज के गाँवों में कीर्तन की फेरियाँ बढ़ेंगी, कीर्तन की फेरियाँ बढ़ने से, भगवान् का नाम चारों ओर फैलेगा | भगवान् के नाम से ही सब काम होता है | आप लोग सोचिये कि भारतवर्ष स्वतंत्र कैसे

हुआ ? साधारण लोग तो इतना ही जानते हैं कि देश-भक्तों ने 'स्वतंत्रता आन्दोलन' किया, उसके परिणामस्वरूप भारत को आजादी मिली | सच्चाई यह है कि सन् १९२९ में महात्मा गाँधीजी ब्रज में आये थे | गोवर्द्धन पहुँचने पर उन्होंने ब्रजवासियों से पूछा कि क्या यहाँ कोई सिद्ध महापुरुष हैं, मैं उनसे मिलना चाहता हूँ तो ब्रजवासी उन्हें उस समय के ब्रज के सबसे मूर्धन्य संत पंडित रामकृष्णदास बाबा के पास ले गये | उस समय वहाँ मेरे गुरुदेव श्रद्धेय श्रीप्रियाशरणजी महाराज भी बैठे थे | गांधीजी ने पंडित बाबा से प्रश्न किया कि १८५७ के पहले से अंग्रेजों के विरुद्ध 'स्वतंत्रता आन्दोलन' किया जा रहा है किन्तु यह सफल क्यों नहीं हो रहा है, आप ब्रज के प्रसिद्ध महात्मा हैं, इसलिए मैं आपसे स्वतंत्रता-प्राप्ति का उपाय पूछने के लिए आया हूँ | पंडित बाबा ने गाँधीजी से कहा कि संसार में कोई भी काम भगवान् की कृपा से ही सफल हो सकता है, आप भगवान् के नाम का कीर्तन करिए, उससे आपका 'स्वतंत्रता-प्राप्ति' का कार्य अवश्य सफल होगा | पंडित बाबा के कहने से गाँधीजी ने.....

"रघुपतिराघव राजाराम पतितपावन सीताराम....|"..... कीर्तन करना आरंभ कर दिया और इस प्रकार सन् १९४७ में भारत स्वतंत्र हो गया | गाँधीजी के बाद भारत में कोई और राजनेता ऐसा नहीं हुआ, जिसने कीर्तन किया हो अथवा गाँधीजी की तरह जनता-जनार्दन के बीच में भगवान् का नाम लिया हो क्योंकि सभी नेता डर गये कि यदि हम धर्मनिरपेक्ष नहीं रहेंगे तो हमे चुनाव में वोट नहीं मिलेगा | इस तरह गाँधीजी की कीर्तन करने की परम्परा किसी नेता ने नहीं अपनाई | साधारण आदमी इस बात को नहीं समझ सकता | एक बार प्रसिद्ध टी.वी. चैनल **'डिस्कवरी चैनल'** वाले मेरा इंटरव्यू लेने मानमन्दिर आये, उन्होंने मुझसे पूछा कि हमने सुना है कि आपके द्वारा ब्रज-सेवा के बड़े-बड़े कार्य किये जा रहे हैं तो इसके लिए आपके पास धन-प्राप्ति का स्रोत क्या है ? मैंने कहा कि मेरे पास केवल **'भगवन्नाम'** का ही आश्रय है, उन्होंने आश्चर्य से कहा कि केवल भगवन्नाम-कीर्तन करने से ही आपके सारे कार्य संपन्न होते हैं और मात्र यही आपके धन-प्राप्ति का भी आधार है | मैंने उनसे कहा तो वे लोग विदेशी थे, इस बात पर विश्वास नहीं कर सके | वे लोग समझ ही नहीं सकते कि 'हरिनाम' क्या चीज है ? विश्वास उनको हो या न हो किन्तु हमने उनसे यही कहा कि हमारा कार्य केवल 'हरिनाम' के बल से ही चलता है | हम किसी के दरवाजे धन की याचना करने नहीं जाते हैं और मेरा ऐसा दृढ़ विश्वास है कि भारत की दयनीय स्थिति को कोई राजनीतिक पार्टी नहीं सुधार सकती है | भारत में प्रत्येक राजनीतिक पार्टी वालों का उद्देश्य केवल कुर्सी प्राप्त करना रह गया है | राजा मान सिंह ने भी कुर्सी अपनाई थी जबकि महाराणा प्रताप ने कुर्सी छोड़ना अपनाया था | हमारे जैसे लोग राणाप्रताप का नाम तो लेते हैं किन्तु काम मानसिंह वाला करते हैं; यह एक गूढ़ बात है | यदि कोई सचमुच में कुर्सी छोड़ने का आदर्श रखे तो आज भी सारा भारत जाग सकता है | सारी राजनैतिक पार्टियाँ और उनके नेता तो केवल कुर्सी पाने के ही चक्कर में रहते हैं | यहाँ तक कि आजकल धार्मिक संस्थाएं और धर्माचार्य भी मान-प्रतिष्ठा और धन की कामना से ही ग्रसित 'जर्जरित' हैं | ऐसी स्थिति में केवल भगवान् का नाम ही देश को सुधार सकता है परन्तु लोगों की आस्था भगवन्नाम में नहीं रह गयी है लेकिन मेरा यह विचार है कि जब भगवन्नाम चारों ओर फैलेगा तो उससे अवश्य ही देश को लाभ होगा | मैं यह चाहता हूँ कि ब्रजवासी यदि वास्तव में अपना, अपने गाँव का और देश का कल्याण करना चाहते हैं तो १०-२० ईमानदार लोगों की एक कमेटी बनाइये और उसके माध्यम से यह विचार कीजिये कि ब्रज की लीलास्थलियों की कैसे रक्षा हो और भगवन्नाम का विस्तार हो | देखो भाई, कुछ सोचने से ही काम होता है | मैंने भगवन्नाम प्रचार की सोचा तो हजारों गाँवों में प्रभातफेरियाँ चलने लगीं जबकि मैं तो एक बहुत छोटा-

सा आदमी हूँ, आप लोग तो ब्रजवासी होने के कारण मुझसे बहुत बड़े हैं, आप लोग यदि सोचेंगे तो मुझसे चौगुना, दस गुना काम कर सकते हैं | किसी राजनीतिक पार्टी से किसी सहयोग की आशा मत करिए, मेरा ऐसा अनुभव है, ये लोग केवल स्वार्थी होते हैं | भारतीय संस्कृति की रक्षा कोई राजनीतिक पार्टी नहीं कर सकती है | ६० साल से मैं ब्रज में रह रहा हूँ, इस अवधि में कितनी ही सरकारें बदल गयीं लेकिन ब्रज में कोई कार्य नहीं हुआ, स्वार्थग्रसित पार्टी या संस्था ने ब्रज के लिए कुछ नहीं किया, यह मेरा अपना अनुभव है | यदि ब्रजवासी कुछ करना चाहते हैं तो आप लोग स्वयं अपने पाँवों पर खड़े होइए | आप लोग यदि आगे चलेंगे तो मैं आप लोगों के पीछे अवश्य चलूँगा | ऐसा नहीं है कि मैं केवल मुख से ही कह रहा हूँ | मुझे न तो किसी से पैसा चाहिए और न कोई चेला-चेली चाहिए परन्तु कुछ ऐसे ब्रजवासी मुझे अवश्य चाहिए जो भारतीय संस्कृति, ब्रज संस्कृति की रक्षा के लिए कुछ सोचें, नहीं तो रामायण में निषादराज ने कहा था –

जायँ जिअत जग सो महि भारू |
जननी जौबन बिटप कुठारू ||

(श्रीरामचरितमानसजी, अयोध्याकाण्ड -१९०)

भरत हमारे प्रभु राम को मारने के लिए जा रहे हैं तो हम लोग उनके मनोरथ सफल नहीं होने देंगे | हमारी सेना छोटी-सी है और उनकी तो चतुरंगिणी सेना है किन्तु हे मेरे साथियों ! हम लोग उनकी नावों को नदी में डुबा देंगे, तुम लोग तैयार हो जाओ | जिसके हृदय में सेवा का भाव नहीं है, वह अपनी माता का हत्यारा है, वह अपनी माँ के यौवन रूपी वृक्ष को काटने वाली कुल्हाड़ी है और ऐसा व्यक्ति मर जाये तो अच्छा है | वह पृथ्वी का बोझ है, जो केवल खाता-पीता और मल-मूत्र त्याग करता है तथा सेवा के बारे में कुछ नहीं सोचता है, बड़ों की सेवा, धर्म की, राष्ट्र की सेवा के बारे में जो कुछ नहीं सोचता है | अपना पेट तो कुत्ता भी भर लेता है | कहने का भाव ऐसा नहीं है कि भारत में एक भी व्यक्ति देश और संस्कृति की रक्षा के बारे में न सोचता हो, सभी कुर्सी के स्वार्थी नहीं हैं | पुण्यात्मा लोग भारत में अभी समाप्त नहीं हुए हैं | ऐसा नहीं है कि देश में त्यागी लोग ख़त्म हो गये हैं | मानमन्दिर के द्वारा ब्रज के हजारों गाँवों में प्रभात फेरियाँ कैसे चलीं, हर गाँव में कुछ अच्छे लोग अवश्य होते हैं, जिन्होंने भगवन्नाम की परंपरा को चलाया | ऐसा नहीं है कि हर गाँव में शत-प्रतिशत लोग नास्तिक होते हैं | ब्रज की संस्कृति की रक्षा के बारे में कौन सोचेगा ? थोड़े दिन बाद हम लोग मर जायेंगे, भावी पीढ़ी में कोई अच्छा संस्कार ही नहीं पड़ रहा है | वर्तमान पीढ़ी के लोग भी ब्रज का गौरव, ब्रज की संस्कृति भूलते जा रहे हैं | इसलिये हे ब्रजवासियो ! अब तुम लोग जागो |

मोहन की वंशी में ये भैरव स्वर गुंजारा है |
जागो-जागो हे ब्रजवासी, जननी ने आज पुकारा है |

ये ब्रजभूमि तुम्हारी माँ है, यह तुमको जगा रही है कि तुम अब जागो, ब्रज के लिए कुछ करो | मेरा यह आह्वान है कि आप लोग कुछ नहीं कर सकते तो अपने गाँव की प्रभात फेरी में प्रतिदिन पाँच नाम दान किया करो, इसमें कोई पैसा नहीं लगता | कागज के नोटों के दान का कोई महत्त्व नहीं होता है | मैं तो प्रतिदिन यात्रा में सबसे कहता हूँ कि मेरे पास आकर कागज के नोट मत चढ़ाओ क्योंकि कागज तो एक दिन गल जाता है | यदि मुझे कुछ देना है तो भगवान् का नाम दो | पद्म पुराण में लिखा है –

गोकोटि दानं ग्रहणेषु काशी,
माघे प्रयागे यदि कल्पवासी |
यज्ञायुतं मेरुसुवर्ण दानं,
गोविन्द नाम्ना न भवेच्च तुल्यम् ||

काशी में ग्रहण के समय करोड़ों गायों का दान किया जाये, वह भी भगवान् के एक नाम के दान के बराबर नहीं हो सकता | इसी प्रकार प्रयाग में माघ के महीने में कल्पवास किया जाये, सुमेरु पर्वत के समान स्वर्ण का दान किया जाये, हजारों यज्ञ किये जाएँ – ये सब साधन मिलकर भी भगवान् के एक नाम के दान के बराबर नहीं

हो सकते हैं | यदि ब्रजवासी मेरा सहयोग करें तो हम भगवन्नाम-प्रचार का चमत्कार पूरे भारत में दिखा सकते हैं | मुझे यदि कोई राजनीतिक पार्टी ब्रज के पर्वतों पर वृक्ष लगाने की अनुमति दे दे तो मैं इन पर्वतों को हरी-भरी गोचर भूमि बना दूँगा और सम्पूर्ण भारत की गायें, जो अनाथ घूम रही हैं, उन्हें इन पर्वतों पर एकत्रित कर दूँगा तथा इस तरह ब्रज में फिर से दूध-नदी की नदियाँ बहने लगेंगी | यदि मेरे साथ ब्रजवासी सहयोग करें तो सारे भारत की गायों को ब्रज के पर्वतों को गोचर भूमि बनाकर उन पर चरने के लिए छोड़ दिया जाये और इस प्रकार गौवंश की जब ब्रज के पर्वतों पर सेवा होने लगेगी तो सम्पूर्ण देश में सुख-समृद्धि फ़ैल जाएगी | महाभारत में च्यवन ऋषि ने नहुष से कहा था कि जहाँ गायें निर्भय विचरण करती हैं, उस देश के समस्त पापों को वे खा जाती हैं और वह देश संपन्न और सुखी हो जाता है | जनता का सहयोग मिलना बहुत आवश्यक है | जनता के सहयोग के बिना तो न मैं ब्रज के नष्ट हो रहे किसी लीलास्थल को बचा सकता हूँ और न ही कोई कार्य कर सकता हूँ | पुन्हानावासियों से मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप लोग एक कमेटी बनाइये, जैसे जुरहरा वालों ने बनायी है, थोड़ा बहुत तो आप लोग आगे बढ़ो, यदि आप लोग थोड़ा-भी आगे बढ़ेंगे तो मैं पुनः आपके पास आऊँगा और आपके गाँव के दस चक्कर लगाऊँगा | यदि आप लोग कुछ नहीं करेंगे तो फिर हमारा-आपका क्या सम्बन्ध रहेगा ? हमें किसी के भोजन-धन और मान-सम्मान की कोई आवश्यकता नहीं है | मैं चाहता हूँ कि आप लोग भगवन्नाम की फेरी में थोड़ा सहयोग करो तथा यदि आपमें और अधिक दम है तो हमारे ब्रज-सेवा के कार्यों में कूद पड़िए, सरकार द्वारा ब्रज के पर्वतों को गोचर-भूमि बनाने की हमें अनुमति दिला दीजिये तो ब्रज के सारे पर्वतों को हमारे ठाकुरजी गोचर-भूमि बनाकर दिखा देंगे | मुझे एक पैसा भी मत देना | मुझे कुछ ऐसे हिन्दू चाहिए जो ब्रज के पर्वतों को गोचर-भूमि बनाने की सरकार से हमें अनुमति दिला दें | इसमें किसी का क्या नुक्सान है, अगर आप लोग सरकार से इस काम के लिए आवाज लगायेंगे तो ऐसा नहीं है कि आपकी आवाज न सुनी जाए | मैं केवल इस कार्य के लिए ब्रजवासियों की सहायता चाहता हूँ और बाकी कोई सहायता मुझे नहीं चाहिए | ब्रजवासी मुझसे कहते हैं कि हमारे द्वारा आपकी यात्रा की सेवा नहीं हो सकी किन्तु राधारानी हमारी महारानी हैं, उनके रहते हमें किसी की सेवा की क्या आवश्यकता है ?

“हमको कहा और सो काम हमारी राधे महारानी |”

(श्रीबाबामहाराज कृत रसिया-रसेश्वरी से)

.....

ब्रज के अर्चावतारों के चमत्कार

‘रसीली ब्रजयात्रा, भाग – २’ से संग्रहीत

संकलनकर्त्री- दीदीजी गुरुकुल की छात्रा बालसाध्वी विरागाजी, मानमन्दिर, बरसाना

जिस समय ब्रज आततायियों से संत्रस्त था, अर्चावतारों द्वारा अनेक चमत्कार हुए जिससे आसुरी शक्ति का पराभव हुआ।

इत्थं नृतिर्यगृषिदेवझषावतारै-
र्लोकान् विभावयसि हंसि जगत्प्रतीपान् ।
धर्म महापुरुष पासि युगानुवृत्तं
छन्नः कलौ यदभवस्त्रियुगोऽथ स त्वम् ॥ (भा.७/९/३८)

कलियुग में श्री भगवान् साक्षात् रूप से नहीं छिपकर धर्म की रक्षा करते हैं। यदि वह स्वयं धर्म के रक्षक न हों तो क्या आज धर्म दिखाई देगा? भारत की लगभग २००० की परतन्त्रता में कितने आये, कितने ही गये किन्तु धर्म का आत्यन्तिक नाश कोई नहीं कर सका, यवन और अंग्रेज तो क्या कालविजयी रावण ने ७२ चौकड़ी राज्य किया था। हिरण्यकशिपु क्या कम था,

भाई की मृत्यु की प्रतिक्रिया में वैकुण्ठ तक पहुँच गया था किन्तु याद रहे –

यदा देवेषु वेदेषु गोषु विप्रेषु साधुषु ।
धर्मे मयि च विद्वेषः स वा आशु विनश्यति ॥

(भा.७/४/२७)

देव, वेद, गो, विप्र, साधु व धर्म का विद्वेषी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। उतार-चढ़ाव अवश्य आते हैं किन्तु धर्म का आत्यन्तिक नाश किसी काल में सम्भव नहीं है। किसी न किसी रूप में भगवान् के द्वारा धर्म की रक्षा होती रही है – **देवक्या जठरे गर्भं शेषाख्यं धाम मामकम् ।**

तत् संनिकृष्य रोहिण्या उदरे संनिवेशय ॥ (भा.१०/२/८)

श्री भगवान् के वचन – हे देवी! इस समय मेरा अंश (शेष) माता देवकी के गर्भ में है उसे वहाँ से निकाल कर रोहिणी के गर्भ में स्थापित कर दो अर्थात् शेष भी भगवान् कृष्ण के अंशावतार हैं –

अवतारा ह्यसङ्ख्येया हरेः सत्त्वनिधेर्द्विजाः ।
यथाविदासिनः कुल्याः सरसः स्युः सहस्रशः ॥

(भा.१/३/२६)

जिस प्रकार अगाध सरोवर से सहस्रों छोटे-छोटे नाले निकलते हैं उसी प्रकार सत्व निधि भगवान् हरि के असंख्य अवतार हुआ करते हैं। जिनमें अर्चावतार भी एक हैं, इसी अवतार से कलिकाल में धर्म की रक्षा होती है।

मैत्रेजी के वचन –

तान्येव तेऽभिरूपाणि रूपाणि भगवंस्तव ।
यानि यानि च रोचन्ते स्वजनानामरूपिणः ॥

(भा.३.२४.३१)

प्रभु अनेक रूप व अनेक लीलाएं करते हैं यद्यपि वे अरूपी हैं अर्थात् आकार रहित हैं किन्तु जो-जो रूप भक्तों को प्रिय लगता है वही-वही रूप प्रकट करते हैं और वैसी लीला किया करते हैं।

यवन काल में आचार्यों द्वारा प्रतिष्ठित ब्रज के विग्रहों का ब्रज के बाहर पलायन करना वैसे ही है जैसे ब्रज से श्रीकृष्ण कालयवनादि के भय से भागे और द्वारिका लीला प्रकट हुई अन्यथा द्वारिका लीला कैसे प्रकट होती? उनका पलायन भी एक लीला है, कृपा है। कलियुग में भी ऐसी लीलाएं हुई हैं जैसे भक्तमाल में...**रामदासजी का चरित्र –**

द्वारिका के पास डाकोर नामक ग्राम में श्री रामदास भक्त निवास करते थे। प्रत्येक एकादशी को द्वारका जाते एवं श्री रणछोड़ जी के मन्दिर में कीर्तन करते हुए रात्रि-जागरण करते थे। जब शरीर वृद्ध हो गया तो एक दिन प्रभु ने आज्ञा दी – राम दास जी! अब आप घर में जागरण कीर्तन कर लिया करें, यहाँ आने की आवश्यकता नहीं है किन्तु वह नहीं माने। तब ठाकुर जी ने उनकी निष्ठा देखकर कहा – तो ठीक है मैं ही तुम्हारे साथ चलूँगा। अगली एकादशी को गाड़ी लेकर आना और उसे मन्दिर की पश्चिमी खिड़की की ओर खड़ी कर देना, रात्रि में जब सब सो जाएं तो शीघ्र ही हमें गाड़ी में पधराकर चल देना। प्रभु का आदेश पाते ही रामदास जी ने ऐसा ही किया।

इस बार जब वे गाड़ी पर चढ़कर आये तो लोगों ने समझा, भगत जी अब वृद्ध हो गये हैं, शरीर में चलने की शक्ति नहीं रह गई है अतः गाड़ी पर चढ़ कर आये हैं। रामदासजी ने एकादशी को रात्रि में कीर्तन किया एवं द्वादशी की रात्रि को पीछे की खिड़की से मन्दिर में जा कर प्रभु के आभूषण उतारे और उन्हें गोद में उठाकर ले आये। गाड़ी को हांक दिया। प्रातः मन्दिर को सूना देखकर पुजारी समझ गये कि यह सब रामदास का ही कार्य है | पुजारियों ने रामदास जी का पीछा किया, पुजारियों को आते हुए देखकर रामदास जी ने कहा – प्रभो! अब क्या करूँ? भगवान् बोले – रामदास जी! देखो सामने इस बावली में मुझे छिपा दो। रामदास जी ने ऐसा ही किया। तब तक पुजारियों ने आकर रामदासजी को पकड़ लिया एवं बहुत मारा। पीठ पर अनेक घाव हो गये। भगवान् तो ढूंढने पर भी न मिले तब मन में पश्चाताप हुआ, हमने इसे व्यर्थ ही मारा, इसके पास हमारे ठाकुर नहीं हैं तब तक किसी एक पुजारी ने बावली में झांककर देखा, भगवान् तो मिल गये

किन्तु बावली का जल, रक्त से लाल हो गया था तब स्वयं भगवान् ने कहा – मेरे भक्त मेरा ही तनु हैं, तुमने रामदास को नहीं अपितु मेरे ही शरीर में चोट पहुँचाई है। यह देखो मेरे शरीर से रक्त बह रहा है। अब मैं तुम्हारे साथ कदापि नहीं जाऊँगा। मेरा दूसरा विग्रह मन्दिर में स्थापित कर लो। जीविका के लिए तुम मेरे इस विग्रह के बराबर सोना ले लो और चले जाओ। पुजारी लोभ वश तैयार हो गये। भगवान् ने राम दास जी को कहा राम दास जी! तराजू पर मेरे बराबर सोना तोल दो, इस पर रामदास जी ने कहा – प्रभो ! भला मुझ गरीब के पास इतना सोना कहाँ से आया? प्रभु बोले – तुम्हारी स्त्री के कान में एक सोने की बाली है, उसी से तोल दो। आश्चर्य की बात, एक छोटी सी बाली तोल में भगवान् से भी अधिक हो गई। श्रीरामदाजी ने पुजारियों से कहा – बाली है तो वजन में अधिक किन्तु आप इसे ले जाएं। आप ब्राह्मण हैं, आप प्रसन्न रहेंगे तो प्रभु भी प्रसन्न रहेंगे।

आज भी डाकोर में श्री रणछोड़ राय जी का मन्दिर दर्शनीय है।

इसी प्रकार श्रीगोविन्ददेव जी, श्रीगोपीनाथ जी, श्रीमदनमोहन जी, श्रीनाथ जी, श्रीमथुरेश जी आदि अनेक अर्चाविग्रहों को मुगल काल में सुरक्षा की दृष्टि से आतंकित ब्रज से ले जाकर जयपुर, भरतपुर, करौली एवं कोटा आदि राजस्थान की रियासतों में पधराया गया। जिस समय बरसाना आतंकग्रस्त हुआ, श्री लाड़ली जी को भी बड़ोदा राजदरबार के परम भागवत राजा श्री किशोरी दासजी के अत्यधिक आग्रह पर, गोस्वामी गणों की अनुमति से श्योपुर ले जाया गया। उस समय "श्री नवल चन्द्र गोस्वामी" श्री दादी-बाबा मन्दिर वाले गुसाईं जी श्रीजी की सेवा के लिए श्योपुर गए। (श्योपुर नरेश श्रीकिशोरी दास जी इन्हीं के शिष्य थे।) दो वर्ष श्योपुर राज दरबार में लाड़िली जी विराजीं। उस समय श्रीजी के सिंहासन पर भूगर्भ से प्रकटित श्री विशाखा जी के श्री विग्रह को विराजमान किया गया। उस बीच मुस्लिम आक्रान्ताओं का अनेक बार बरसाने में आक्रमण हुआ। एक बार ऊँचे गाँव से बरसाने तक मुस्लिम हमलावरों का घिराव हो गया। तब श्री विशाखा जी की कृपा से ही रक्षा होती रही। बरसाने का समूल नाश ही हो जाता किन्तु अद्भुत् चमत्कार हुआ। श्रीजी के महल से लेकर पूरे पर्वत पर मुसलमानों को सहस्रों सशस्त्र सैनिक दिखाई पड़े, पीछे से भरतपुर का परम पराक्रमी राजा श्री बच्चू सिंह सदलबल मुसलमान सैनिकों को मारते-काटते बरसाने आ पहुँचा। एक भी मुसलमान शेष नहीं बचा। इस प्रकार श्रीलाड़िली जी महाराज की कृपा से विजय हुई। अतः श्रीलाड़िली जी के स्थान पर विराजित श्रीविशाखा जी का नाम ही विजय लाड़िली हुआ। यवनों का उत्पात शान्त होने पर श्री लाड़िली जी की प्रेरणा से गोस्वामी बाबा ने राजा से श्रीजी को लेकर बरसाना लौटने की प्रार्थना की किन्तु जिसके हाथ चिन्तामणि लग जाय भला फिर वह उसे कैसे छोड़ सकता है? फिर राजा परम भक्त था, भावुक था किन्तु अब श्रीलाड़िलीजी के बिना रहना नहीं चाहता था। मन में संदेह तो हो ही गया कि कहीं यह वृद्ध गोस्वामी अवसर पाकर श्रीजी को लेकर भाग न जाए अतः उसने मन्दिर पर कड़ा पहरा बैठा दिया। रात्रि में श्रीजी के शयनोपरान्त मन्दिर का ताला लगाकर ताली (चाबी) अपने महल में मँगवा लेता था। प्रातःकाल गोस्वामी बाबा राजमहल से ताली लाकर मन्दिर खोलकर तब श्रीजी की मंगला करते थे। इस प्रकार और कुछ दिन व्यतीत हो गए। गोस्वामी जी ने राजा की नीयत में खोट देखकर श्रीजी से ही प्रार्थना की, इस पर श्रीजी ने कहा – तुम चिन्ता न करो, आज रात्रि में शयन भोग के पश्चात् तुम मुझे लेकर पश्चिमी खिड़की से निकल जाना। बस फिर क्या था, रात्रि होते ही श्रीजी के आदेशानुसार गोस्वामी बाबा उन्हें अपने बटुए में पधराकर ले चले। वृद्ध तो थे ही, सम्पूर्ण रात्रि चलते रहे, प्रातः होते-होते चम्बल के किनारे पहुँचे किन्तु बिना नौका के उस अगाध जल को पार करना सम्भव नहीं दिखाई पड़ता था। इस

पर उन्होंने श्री लाड़िली जी से ही कहा – "लाड़ो ! अब चम्बल कैसे पार होगी? " "आप मुझे छाती में बाँधकर चम्बल में कूद पड़ो।" इस प्रकार श्रीजी की आज्ञा पाते ही गोस्वामी बाबा ने वैसा ही किया और जल में थलवत् चलते हुए सहज ही नदी पार कर गये। इधर मंगला आरती के समय मन्दिर को सूना देखकर राजा ने सब सैनिकों को दौड़ाया किन्तु चम्बल के अगाध जल को देखकर नदी पार करने का न घुड़सवारों का ही साहस हुआ, न घोड़ों का ही; खाली ही लौटना पड़ा।

श्योपुर से पैदल बरसाना लौटते समय वृद्ध गोस्वामी बाबा ने अनेक स्थानों पर श्रीजी को विश्रामादि कराया। प्रथम रात्रि निवास खण्डार तहसील, राजस्थान में किया; आज भी यहाँ श्रीजी मन्दिर दर्शनीय है। इसके अतिरिक्त घासेरा में विश्राम हुआ, कालान्तर में घासेरा के जागीरदार ने श्रीजी मन्दिर-शिखर का निर्माण कराया।

श्री श्रीजी महाराज के श्योपुर से पुनः बरसाना आगमन पर श्रीविजयलाड़िली जी अपने पूर्व स्थान पर ही विराजमान कर दी गईं एवं श्रीजी महाराज अपने महल में निज सिंहासन पर विराजीं। मन्दिर में श्रीजी की ही भाँति विजयलाड़िली जी की भी नित्य सेवा पूजा होती है। श्री श्रीजी की आरती के पश्चात् पुजारी पार्श्व में श्रीविजयलाड़िली जी की तीन बार आरती उतारते हैं तत्पश्चात श्री बरसाने की एक आरती उतारते हैं।

सुना जाता है कि श्रीजी के आने के कुछ दिन बाद ही श्योपुर नरेश श्री किशोरीदास जी भी बरसाने आये। अपनी भूल पर पश्चाताप करते हुए श्रीजी से क्षमा याचना की एवं श्रीजी की सेवा में एक हजार बीघा भूमि दी, जो गोस्वामी गणों के आधीन है।

वस्तुतः इन्हीं अर्चावतारों से ब्रज के बाहर भी भक्ति का प्रचार प्रसार होता रहा। यदि गोविन्ददेव जी जयपुर न जाते तो आज वहाँ नित्य ही लाखों दर्शनार्थी दर्शन करते हैं, वो कैसे करते? इसी प्रकार मदन मोहन जी के आने से करौली में भक्ति बढ़ी एवं श्रीराधा रानी के श्योपुर पधारने से मध्य प्रदेश, राजस्थान में श्रीराधा रानी की महिमा प्रकट हुई।

पुनः आये श्रीराधारमण

शताब्दियों पूर्व प्रादुर्भूत श्रद्धेय श्री नारायण भट्ट जी द्वारा प्रकटित एवं प्रतिष्ठित दिव्य विग्रह राधारमण जी बड़े ही चमत्कारिक ठाकुर जो ब्रजवासियों के प्राण स्वरूप हैं। दैवी-राक्षसी प्रवृत्ति का संगम अनादिकाल से चला आ ही रहा है। देव थे तो असुर भी थे। कृष्ण आये तो कंस भी आया। भगवान् अपने भक्तों के ऊपर कृपा वर्षा हेतु अवतरित होकर ऐसी लीलाएं करते हैं जिससे भक्तों का सतत मंगल होता रहे, राधारमण जी ने भी एक ऐसी लीला की, प्रथम तो भक्तों को घोर संकट में डाल दिया। दिनांक ७/११/२०१३ की रात्रि में शयनोपरान्त प्रातः जब मन्दिर के कपाट खोले तो पुजारी जी के पैरों तले मानों जमीन ही खिसक गई। देखते हैं कि राधारमण जी मन्दिर में हैं ही नहीं। आगमन का ताँता लगा हुआ था परन्तु स्थिति बड़ी विचित्र होती गई। सारा गाँव एकत्रित हो गया और बात सामने आई कि राधा रमण जी चोरी हो गए। मन्दिर में ताले लगे थे, मोटी-मोटी दीवारें थीं, यह हुआ क्या? खोज प्रारम्भ हुई लेकिन कोई परिणाम नहीं आया। कितने ही लोग संदिग्ध दृष्टि से देखे जाने लगे। पुलिस प्रशासन में प्राथमिकी लिखाकर चोरों को पकड़ने का दबाव बनाया जाने लगा। लोगों ने आन्दोलन भी कर दिया परन्तु कुछ हाथ नहीं लगा। गाँव के वरिष्ठ-जन पूज्य बाबा महाराज के पास आये। बाबा ने कहा कि हम तो भैया ये जानते हैं कि यह ठाकुर की कोई लीला है। हमारे यहाँ से भी मानबिहारी लाल चोरी हो गए थे और हमारे मन्दिर के लोगों ने कहा मन्दिर सूना है, कोई दूसरे विग्रह लाये जाएँ तो हमने कहा कि नहीं। वही ठाकुर आयेंगे। आराधना में प्रबल शक्ति है। सब लोग अखण्ड भगवन्नाम संकीर्तन करो। हुआ भी यही, १८ दिन बाद पश्चिम बंगाल के एक गाँव से मानबिहारी लाल प्राप्त कर लिए गए, पुलिस थाना में छप्पन भोग लगे और वायुयान द्वारा दिल्ली आये। पूरे

ब्रज में उत्सव के साथ मान मन्दिर पहुँचे। हमारा विश्वास है कि ऐसा ही यहाँ भी होगा, एक दिन ठाकुर अवश्य आयेंगे।"

आराधना व महापुरुषों की वाणी अवश्य ही फलीभूत होती है। पूज्य बाबाश्री की आज्ञा से मन्दिर में अखण्ड हरिनाम संकीर्तन आरम्भ हो गया। मानमन्दिर की सभी बालिकाएं और संत श्रीबाबा के आदेश से गाँव संकेत गये और वहाँ घर-घर में जाकर कीर्तन की प्रेरणा देने लगे। बड़ी धूमधाम से संकीर्तन होने लगा। मान मन्दिर में भी ठाकुर श्री राधा रमण जी के प्रत्यागमन की मंगल कामना से अखण्ड हरिनाम संकीर्तन किया जाने लगा। भगवान् प्रेम वृद्धि के लिए बहुधा ऐसी लीला किया करते हैं। रास में अन्तर्धान हो गए तो गोपियों ने भी यही कार्य किया। सभी ने मिलकर गोपी गीत गाया और उसके पश्चात् प्रेम और प्रगाढ़ हो गया, तभी श्री कृष्ण मिलन हुआ।

यहाँ भी राधा रमण जी ने चमत्कार दिखाया। प्रतीक्षा थोड़ी लम्बी करनी पड़ी परन्तु ऐसा कैसे हो सकता था कि महापुरुष की वाणी को भगवान् मिथ्या कर दें। लम्बे अन्तराल के पश्चात २/१०/२०१४ को अपराधियों को पकड़ लिया गया। ठाकुर जी आ गये, सारे ब्रज में हल्ला हो गया। धूमधाम से उत्सव मनाया जाने लगा और ०५/१०/२०१४ को ठाकुर जी को विधिवत् प्रतिष्ठित किया गया। राधा रमण जी का यह प्रत्यागमन ब्रजवासियों, संतों ने एक चमत्कार के रूप में ही देखा क्योंकि आज तक पुरातन विग्रह (जो अष्टधातु के थे) चोरी होने के बाद वापस नहीं आये। यद्यपि यहाँ संकेत में भी जयपुर से दूसरे विग्रह लाये गए थे परन्तु बाबा महाराज ने कह दिया था कि वही ठाकुर आयेंगे। बाबाश्री की इच्छा व ब्रजवासियों के प्रेम को देख कर प्रभु ने कृपा की और वे फिर से पधारे | अब प्रति वर्ष श्रीराधारमण जी का विशाल उत्सव मनाया जाता है।

.....

ब्रज व निकुञ्ज में किया भेद

'रसीली ब्रजयात्रा, भाग – २' से संग्रहीत

संकलनकर्त्री- दीदीजी गुरुकुल की छात्रा बालसाध्वी लक्ष्मीजी , मानमन्दिर, बरसाना

ब्रज व निकुञ्ज में भेद धामापराध है, नामापराध है, भगवदपराध है। आधुनिक रसिकों का कहना है कि ब्रज और निकुञ्ज की लीला इसलिए पृथक् है क्योंकि निकुञ्ज लीला में एकरसता है। रस का एक जैसा प्रवाह है और ब्रजलीला में एकरसता नहीं है, यहाँ तो श्रीकृष्ण ब्रज छोड़कर मथुरा चले जाते हैं तो गोपियों को विरह होता है और निकुञ्ज लीला में नित्य संयोग है, वियोग नहीं है। यहाँ न मथुरा गमन है और न द्वारिका गमन बल्कि नित्य विहार है।

ब्रज की समरसता का सबसे बड़ा प्रमाण है – युगलगीत।

महारास के बाद युगलगीत का वर्णन ही ब्रज की एकरसता को प्रकट करने के लिए हुआ है। ब्रज का अचर-सचर सब रसमय है। रस का ऐसा सम्मोहन है कि चराचर सृष्टि चित्र लिखित हो जाती है।

सवनशस्तदुपधार्य सुरेशाः शक्रशर्वपरमेष्ठिपुरोगाः।
कवयआनतकन्धरचित्ताः कश्मलंययुरनिश्चिततत्त्वाः॥

(भा. १०/३५/१५) नदियों को देखो, रस के कारण उनके प्रवाह में स्तब्धता आ जाती है। तरु, लताओं से मधुधारा स्रवित हो रही है। सब उपासना में तल्लीन हैं। किसी के नेत्र बंद हैं तो कोई मौन धारण किये हुए है। रस की जाड्यावस्था को प्राप्त हो गये हैं। पर्वतों पर भी यही रस है, बादल भी अनुगर्जन कर रहे हैं। कैसी चिन्मयी प्रकृति है। न वाद्य की आवश्यकता है न वादक की, अपने-आप ही संगीत ध्वनि हो रही है। ब्रज के गाय, बछड़े, मोर, हरिनियाँ, नदियाँ, बादल, पर्वत

.....सबमें एक ही रस का प्रवाह है। युगल गीत के माध्यम से श्री शुकदेव जी कहते
हैं कि महारास के बाद रस की समाप्ति न समझें। ब्रज की चराचर सृष्टि में नित्य-रस व्याप्त है। भगवान् की प्रत्येक लीला चाहे वह संयोग लीला है अथवा वियोग , वह प्रेमाभिवृद्धि के लिए ही हुई है।
प्रेम द्विदलात्मक है –
१. संयोग २. वियोग।
वियोग के बिना संयोग सम्भव नहीं और संयोग के बिना वियोग सम्भव नहीं है।
श्री हिताचार्य की वाणी में दोनों पक्षों की पुष्टि –

चकई प्राण जु घट रहैं पिय बिछुरंतनिकज्ज।
सर-अन्तर अरु काल-निशि तरफ तेज घन गज्ज॥
तरफ तेज घन गज्ज लज्ज तुहि वदन न आवै।
जल-विहून करि नैन भोर किहिं भाइ बतावै॥
जय श्रीहित हरिवंश विचारि बाद अस कौन जु बकई।
सारस यह संदेह प्राण घट रहैं जु चकई॥

(श्री हित स्फुट वाणी-५)

चक्रवाकी चक्रवाक से वियुक्त होने पर भी जीवित रहती है। सारस की दृष्टि से यह प्रेम अपूर्ण है।
सारस कहता है –
हे चकई! तू रात भर अपने प्रियतम से अलग रहती है और मिलन की आशा में अपने प्राण नहीं छोड़ती, मेरी दृष्टि में तेरा प्रेम अपूर्ण है। प्रियतम के वियोग में तुझे प्राण त्याग कर देना चाहिए। हमारा प्रेम देख, हम कभी अकेले रह ही नहीं सकते हैं। मेरे वियोग में सारसी और सारसी के वियोग में मैं प्राण परित्याग कर देता हूँ। हम अपने प्रिय के वियोग में एक क्षण भी नहीं रह सकते हैं। किन्तु ध्यान रहे जो विरह वह्नि को नहीं सह सकता है, वह प्रेम की तीव्रता को कभी नहीं जान सकता है। ऐसी स्थिति में सारस-सारसी का प्रेम भी अपूर्ण है।
प्रेम की पूर्णता तो संयोग व वियोग दोनों पक्षों से ही होगी, यहाँ तक कि प्रेम की उत्कृष्ट अवस्था में तो संयोग में भी वियोग की अनुभूति होने लगती है।

प्रियस्य सन्निकर्षेऽपि प्रेमोत्कर्ष स्वभावतः।
या विश्लेषधियार्तिस्तत् प्रेमवैचित्त्यमुच्यते॥

(भा.११/२/३५ टीका श्रीधर स्वामी)

यह है प्रेम वैचित्त्य जिसमें प्रियतम की गोद में भी विरह का आनन्द लिया जा रहा है। प्रेम वैचित्री की आवश्यकता क्यों हुई? क्योंकि इसके बिना प्रेम में उत्कण्ठा नहीं आयेगी।
प्रेम वैचित्र्य –

अङ्कस्थितेऽपि दयिते किमपि प्रलापं हा मोहनेति मधुरं विदधत्यकस्मात्।
श्यामानुराग मदविह्वलमोहनाङ्गी श्यामामणिर्जयति कापि निकुञ्जसीम्नि॥

(रा.सु.नि. ४६)

प्रियतम के अंक में विराजमान होकर भी प्रेमातिशय के कारण श्रीराधारानी को विरह का अनुभव हो रहा है। हा मोहन! हा श्यामसुन्दर! कह कर, मधुर प्रलाप कर रही है।

वीणां करे मधुमतीं मधुरस्वरां तामाधाय नागरशिरोमणिभावलीलाम्।
गायन्त्यहो दिनमपारमिवाश्रुवर्षैर्दुःखान् नयन्त्यहह सा हृदि मेऽस्तु राधा॥

(रा.सु.नि. ४८)

अपनी मधुमती वीणा पर प्रियतम की मधुर लीलाओं को गाते हुए, अश्रु बहाते हुए किसी तरह उस दिन को व्यतीत करने का प्रयास कर रही हैं।

शुद्धप्रेमैकलीलानिधिरहहमहातङ्कमङ्कस्थितेच प्रेष्ठे
बिभ्रत्यदभ्रस्फुरदतुलकृपास्नेहमाधुर्यमूर्ति।
प्राणालीकोटिनीराजितपदसुषमामाधुरीमाधवेनश्रीराधा
मामगाधामृतरसभरिते कर्हि दास्येऽभिषिञ्चेत्॥

(रा.सु.नि.१२७)

प्रियतम के अंक में स्थित रहने पर भी जिन्हें दुःसह वियोग का भय है।
श्रीरूप गोस्वामी जी की वाणी में –

आभीरेन्द्रसुते स्फुरत्यपि
पुरस्तीव्रानुरागोत्थया विश्लेषज्वरसम्पदा
विवशधीरत्यन्तमुद्घूर्णिता।
कान्तं मे सखि दर्शयेति दशनैरुद्दूर्णशस्पाङ्कुरा
राधा हन्त तथा व्यचेष्टत यतः
कृष्णोऽप्यभूद्विस्मितः॥

(उज्जवलनीलमणि, श्रृंगारभेद प्रकरण-१५/१४८)

श्री राधारानी के सन्मुख ही श्यामसुन्दर खड़े हैं किन्तु तीव्र अनुराग के कारण श्रीजी विश्लेष ज्वर से पीड़ित हो

रही हैं। अपनी सखी से कहती हैं – हे सखि, एक बार मेरे प्रियतम को दिखा दे। श्रीजीकी यह स्थिति देखकर स्वयं श्यामसुन्दर भी विस्मित हैं।

विचार करें, श्रीजी मान क्यों करती हैं?

मान में प्रियतम की ओर न देखना, न बोलना भी तो विरह है। (रा.सु.नि. २३०)

अप्रेक्षे कृतनिश्चयापि सुचिरं दृक्कोणतो वीक्षते
मौने दार्ड्यमुपाश्रितापि निगदेत् तामेव याहीत्यहो।
अस्पर्शे सुधृताशयापि करयोर्धृत्वा बहिर्यापयेद्
राधाया इति मानदुःस्थितिमहं प्रेक्षे हसन्ती कदा॥

श्रीराधारानी ने निश्चय कर लिया है, प्रियतम की ओर न ही देखूँगी, न ही उनका स्पर्श करूँगी किन्तु इस मान से न्यूनता नहीं आती, बल्कि प्रेम-रस की वृद्धि ही होती है। नित्य विहार का अर्थ नित्य संयोग ही नहीं है। श्री हित चतुरासी में चौरासी पदों में लगभग ग्यारह पदों में मान रूपी विरह का वर्णन है। सम्पूर्ण चौरासी पदों में द्वादशांश मान रूपी विरह ही है, विरह भी साधारण नहीं, उत्कट विरह है।

यथा –

चलहि किन मानिनी कुञ्ज कुटीर।
तो बिनु कुंवर कोटि बनिता जुत मथत मदन की पीर॥
गदगद सुर, विरहाकुल पुलकित, स्त्रवत बिलोचन नीर॥
क्वासि-क्वासि वृषभानु नन्दिनी, बिलपत विपिन अधीर॥
वंशी विसिख, व्याल मालावली, पंचानन पिक कीर॥
मलयज गरल, हुतासन मारुत, साखामृग रिपु चीर॥
"जैश्री हित हरिवंश" परम कोमलचित चपल चली पिय तीर॥
सुनि भयभीत बज्र कौ पंजर, सूरत सुर रणधीर॥

(श्रीहितचौरासी-३७)

श्यामसुन्दर श्री राधारानी के विरह में अधीर होकर विलाप कर रहे हैं। हे राधे! तुम कहाँ हो, तुम्हारे बिना ये वंशी मुझे बाण की तरह चुभ रही है, गले की माला सर्प की भाँति प्रतीत हो रही है। तोता और मोर का बोलना सिंह की गर्जना के समान लग रहा है। चन्दन विषवत, शीतल मन्द सुगन्धित समीर अग्नि की लपटों की तरह, वस्त्र किवाच (एक ऐसी घास जो पूरे देह में खुजली कर दे) की तरह प्रतीत हो रहे हैं। विचित्र दशा हो गयी है।

श्री विहारिन देव जी की वाणी में –

रूठनौं टूठनों यों रस बूठनों तूठनें तें अति रूठनौं भावै।
प्रेम प्रबीन प्रिया पिउ आतुर चातुर केलि कला गुन गावै॥
नाँहि करै तब पाइ परै हँसि आलस यौं मन मोद बढ़ावै।
श्री बिहारिनिदासि कैं प्रेम अभंगु सु रंग मैं रंग अनंग बढ़ावै॥

(विहारिन देव जी की वाणी पद सं-१४६)

तोंकों बोलत कुञ्जनि कुञ्जबिहारी प्रिया ललनाँ मन भाइकुरी। लई बोलि अमोल दै सैंन पठाइ परी न कही इतराइकुरी॥ इहिं ओसर और न आँन गटी श्रमु मेरा वृथा न गवाँइकुरी।

श्री बिहारीबिहारिनिदासि भनें साँवरौ सुखदाइक नाइकुरी॥

(विहारिन देव जी की वाणी पद सं-१४७)

राधासुधानिधि में विरह –

श्लोकान् प्रेष्ठयशोऽङ्कितान् गृहशुकान् अध्यापयेत् कर्हिचिद्
गुञ्जामञ्जुलहार बर्हमुकुटं निर्माति काले क्वचित्।
आलिख्य प्रियमूर्तिमाकुलकुचौ सङ्घट्टयेद् वा कदाप्य्
एवं व्यापृतिभिर्दिनं नयति मे राधा प्रियस्वामिनी॥

(रा.सु.नि. १८०) अपने विरहजन्य दुःख को कम करने के लिए श्री राधारानी कभी तो तोते को कृष्ण का गुणगान करना सिखाती हैं, कभी अपने प्रियतम के लिए स्वयं गुञ्जामाला बनाती हैं, मोर मुकुट बनाती हैं और कभी अपने प्रियतम का चित्र बनाकर उसे अपने वक्षःस्थल से लगाती हैं।

श्यामश्यामेत्यनुपमरसापूर्णवर्णैर्जपन्ती
स्थित्वा स्थित्वा मधुरमधुरोत्तारमुच्चारयन्ती।
मुक्तास्थूलान् नयनगलितान् अश्रुबिन्दून वहन्ती
हृष्यद्रोमा प्रतिपदचमत्कुर्वती पातु राधा॥

(रा.सु.नि. २१७)

कभी-कभी तो उच्च स्वर से उनका नाम संकीर्तन करती हैं। नेत्रों में स्थूल अश्रु-बिन्दु हैं, शरीर रोमांचित है (रा.सु.नि.२५४) कभी – हे श्याम; नाम जप कर रही हैं तो कभी प्रेमोत्कण्ठा में उच्च स्वर से नाम संकीर्तन करती हैं। अत्यन्त दुःख के कारण कभी भी जिनका मन

नहीं लग रहा है, वे श्री राधारानी कभी सूर्य पर क्रुद्ध हैं – रे सूर्य! तू शीघ्र अस्त क्यों नहीं होता।

क्या ये सब श्रीजी की विरह लीला नहीं है?

विरह भीरु जनों ने रस नष्ट कर दिया।

विरहामृत भी आस्वादनीय है।

महावाणी में विरह –

मोहिं मिलाय दै री मेरी जीवनि प्रान।
मैं बहुते करि मानिहौं मो पर तेरो अहसान॥
तू ही तू हिय की हितू री तो बिन सरत न काज।
अब मेरे या जीय की री है सब तोहि कौं लाज॥
कहा करौं कैसे भरौं री बिन देखे नहिं चैन।
मनमोहन मुख अवलोकनकौं तरसत मेरे (ए) नैन॥
अति की गति सब होय चुकी री अब कछु रती रही न।
तरफर तरफर करत फरफरत जैसे जल बिन मीन॥
तन तनक न धीरज धरै री मनहू निपट अधीर।
पलक सह्यौ नहिं परत है मोहिं सखामृग रिपु चीर॥
जित देखौं तित दुखमई री भई दिसि बिदिसा मोहिं।
आनंदकंदा चंद के बिनु क्यों सियराई होहिं॥
अंग अंग सिथिलै भये री बुद्धि बिकल बेहाल।
रहत न प्रान कपूर ज्यों (ये) बिनु गुंजा-गोपाल॥
मनअनुसारिनि है तूही री तोसों कहा दुराव।
श्रीहरिप्रिया निहचै लगो मेरौ मन बच तोसों भाव॥

(महावाणी उत्साह सुख-४०)

यदि यह सब नहीं मानेंगे तो आचार्यों की वाणी के साथ रस व लीला का खण्डन होगा।

विच्छेदाभासमात्राद् अहह निमिषतो गात्रविस्रंसनादौ
चंचत्कल्पाग्निकोटिज्वलितमिव भवेद् बाह्यमभ्यन्तरं च।
गाढस्नेहानुबन्धग्रथितमिव तयोरद्भुतप्रेममूर्त्योः
श्रीराधामाधवाख्यां परमिह मधुरं तद्द्वयं धाम जाने॥

(रा.सु.नि. १७३)

विच्छेद के आभासमात्र से ही जिन्हें कोटि-कोटि प्रलयाग्नियों के दाह की पीड़ा हो उठती है किन्तु ध्यान रहे कि यह दाह भी बड़ा मधुर है, यह प्राकृत दाह नहीं है।

प्रेमयोग की अग्नि का मधुर दाह है। प्रेम की अद्भुत मूर्ति श्री राधामाधव दोनों ही प्रगाढ़ स्नेह-सूत्र में बंधे हैं तभी तो **"मधुराधिपते रखिलं मधुरं"** हैं। इनका विरह भी मधुर है, अति रसमय है। स्वयं श्रीराधारानी ने विरह-गान किया है।

काचिन्मधुकरं दृष्ट्वा ध्यायन्ती कृष्णसङ्गमम्।
प्रियप्रस्थापितं दूतं कल्पयित्वेदमब्रवीत्॥

(भा.१०/४७/११)

यहाँ काचित् का अर्थ है – 'श्रीराधा' जिसे आचार्यों ने स्पष्ट किया है –

"काचित् कापि तासां मुख्यतमैका यद्वा के प्रेमसुखे आसमन्तात् चित् विज्ञानं यस्याः सा राधा यथा आग्नेये –
गोप्यः पप्रच्छुरुषसि कृष्णनुचरमुद्धवम्।
हरिलीलाविहारांश्च तत्रैकां राधिकां विना॥
राधा तद्भावसंलीना वासनाया विरामिता।
सखीभिःसाभ्यधाच्छुद्धविज्ञानगुणबृंहिता॥
इज्यान्तेवासिनंवेदचरमांशविभावनैः॥

(श्रीमत्सनातनगोस्वामिकृतबृहत्तोषिणी)

काचित् कापि परमप्रेष्ठा सा च श्रीराधेत्यर्थः। श्लेषेण च के प्रेमसुखे आ समन्तात् चित् ज्ञानं यस्याः सेति कं सर्वेषां प्रेमसुखमाचिनोति क्षणे क्षणे वर्द्धयति या सेति च मुख्यत्वात् सैव।

(श्रीमज्जीवगोस्वामिकृतवैष्णवतोषिणी)

जिन्हें प्रेम सुखका ज्ञान है वे श्री राधा रानी विरह में साथ दे रही हैं अतः अनेक आचार्यों ने काचित् का अर्थ श्रीराधा ग्रहण किया है।

गोपीगीत एक विरहगीत है जिसकी गायिका भी स्वयं श्रीराधारानी हैं। इसका प्रमाण है –

अनयाऽऽराधितो नूनं भगवान् हरिरीश्वरः।
यन्नो विहाय गोविन्दः प्रीतो यामनयद् रहः॥

(भा. १०/३०/२८)

श्रीराधारानी ही श्यामसुन्दर के साथ एकान्त में गई हैं और जब श्यामसुन्दर उन्हें छोड़कर चले गये तब विरह में यह गान हुआ है। भ्रमरगीत की गायिका श्री राधिका हैं। लोग ब्रजलीला का खण्डन करते हैं किन्तु ध्यान रहे

बलि का राज्य छीनने की, शूर्पणखा को विरूप करने की बातें भ्रमरगीत में स्वयं श्रीजी कह रही हैं तो ब्रजलीला में श्री राधारानी मुख्य रूप से हैं।

श्रीकृष्ण ने धेनुकासुर को मारने के लिए उसके पैर पकड़े, इस लीला को सुनकर श्री राधावल्लभ सम्प्रदायानुगत नागरीदास जी महाराज मूर्च्छित हो गये। श्री राधारानी के चरणों को पकड़ने वाले करकमल कहीं गधे के पैर पकड़ेंगे। इससे परवर्ती आचार्यों ने कहा – हम भी ब्रजलीला नहीं गायेंगे। श्री नागरीदास जी की यह करना अपराध ही है। ब्रज के भीतर ही निकुञ्ज है, निकुञ्ज पृथक् नहीं है।

रसोपासना के प्राकट्यकर्ता अनन्य नृपति स्वामी श्री हरिदास जी महाराज के अष्टादश सिद्धान्त पदों में एक ही पद ने "मन लगाय प्रीति ....." यह स्पष्ट कर दिया कि इन आचार्यों का भाव सर्वथा भेदातीत था।

समकालिक रसिकवर श्री हरिराम व्यास महाराज ने आपके विषय में कहा –

"देह विदेह भये जीवित ही बिसरे बिस्व विलास"

(व्यास वाणी)

ललित किशोरी देव जी ने कहा है –

लगी समाधि बिहार की, छूटै नही दिन रैन।
गोर श्याम बिलसैं सदा, श्रीहरिदासी ऐंन॥

ऐसी स्थिति में भला पृथक् भाव कहाँ सम्भव है!

स्वामी श्री हरिदास जी की वाणी में ब्रज, निकुञ्ज एवं श्री मद्भागवत –

मन लगाय प्रीति कीजै, कर करवा सौं ब्रज-बीथिन दीजै सोहनी।
वृन्दावन सौं, बन-उपवन सौं, गुंज-माल हथ पोहनी॥
गो गो-सुतन सौं, मृगी मृग-सुतन सौं, और तन नेकु न जोहनी।

एक विशेष स्थिति थी किन्तु इसका आशय ब्रजलीला का खण्डन नहीं है।

"जामें मरे न बीछुरै रूठें नहिं कहू जाइ"

(विहारिनदेव जी वाणी-३७९)

इन पंक्तियों को लेकर प्रयाण लीला, वियोग लीला व मान लीला का खण्डन करने वाले अल्पज्ञ हैं। अरे, जिस लीला की गायिका स्वयं श्री राधिकारानी हैं; उसका खण्डन क्या इष्ट का अपमान नहीं है? ब्रजलीला, विरह लीला स्वयं श्री राधारानी ने गायी है।

कथनाशय संयोग, वियोग दोनों से मिलकर ही प्रेम पूर्ण होगा अतः वियोग से डरकर ब्रज व निकुञ्जको पृथक् **"श्रीहरिदास"के स्वामी स्यामा-कुञ्जबिहारी (सौं चित), ज्यौं सिर पर दोहनी॥**

(स्वामी हरिदास रस सागर, अष्टादशसिद्धान्त के पद-१२)

प्रस्तुत पद में "वन-उपवन सौं" का तात्पर्य है ब्रज। यदि ब्रज व निकुञ्ज में भेद होता तो स्वामी जी ब्रज की गलियों में सोहनी सेवा की आज्ञा क्यों देते?

पुनः **– वृन्दावन अर्थात् वृंदावनान्तर्गत समस्त वन। श्री वृन्दावने काननेषु तदन्तर्गतेषु काम्यक वनादिषु तत्र तयोर्विहारो वेष विशेष चोक्तः।**

(श्रीमज्जीवगोस्वामी कृत वैष्णव तोषिनी टीका.भा.१०/२४/२५)

श्रीवृन्दावनभूमौनन्दीश्वराष्टकूटवरसानुधवलगिरिसौगन्धिकादयो बहवोऽद्रयोवर्त्तन्ते॥

(श्रीमज्जीवगोस्वामी कृत वैष्णव तोषिनी टीका.भा.१०/२४/२५)

वन-उपवन अर्थात् ब्रज के अन्य समस्त वन।

ब्रज भक्ति विलासानुसार –

तत्रादौ वनोपवन प्रतिवनाधिवनान्यष्ट चत्वारिंशत् तानिचतुरष्टक्रोश–परिणामस्थितानि चतुर्भागशोऽभ्यन्तरस्थितानि क्रमश आह॥

कहाँ है ब्रज व निकुञ्ज में भेद ?

'रसीली ब्रजयात्रा, भाग – २' से संग्रहीत

संकलनकर्त्री- साध्वी अचलप्रेमाजी, मानमन्दिर, बरसाना

जहाँ श्री बिहारिन देव जी "श्री वृन्दावन रस खाँनि खँदानौ" गा रहे हैं, वहीं अगले पद में "ब्रज रज राज कियो रज राखी" गा रहे हैं।

यह भेद है अथवा ऐक्य ?

श्री बिहारिनदेव जी ने स्वयं ब्रज व निकुञ्ज का ऐक्य दर्शाया है।

हम लोगों का रिसीवर दूषित होने से रसिकाचार्यों की मूल वाणी व भाव समझ से बाहर हो जाता है। इन भावों को झगड़े की झोपड़ी बनाने वालों का रिसीवर दूषित है। ट्रांसमीटर व रिसीवर दोनों का सम्मिलित सहयोग आकाशवाणी (रेडियो) है । ट्रांसमीटर सही है और रिसीवर गलत है तो मूल का स्वरूप बिगड़ जायेगा।

परम भगवदीय श्री कुम्भनदास जी श्री युगल की निकुञ्ज लीला के रसिक थे । एक बार सुपुत्र श्री चतुर्भुजदास जी गोकुल गये। लौटने पर श्री कुम्भनदास जी ने पूछा – आज कहाँ गये थे? इस पर चतुर्भुजदास जी ने बताया – आज गोकुल गये थे, बाललीला का प्रकरण था।

किन्तु प्रमाणलीला में क्यों गये?

यहाँ प्रमेय लीला में ही रहते।

प्रमाण अर्थात् साधन एवं प्रमेय अर्थात् साध्य।

श्रृंगार रस साध्य है एवं सख्य, वात्सल्यादि साधन हैं। प्रमाण प्रकीर्ण में न जाकर, प्रमेय प्रकीर्ण में रहो व अनन्य रसिक बनो, कुम्भनदास जी के इस प्रकार कहने पर श्री चतुर्भुजदास जी ने गुसांई श्री विट्ठलनाथ जी से इसका आशय जानना चाहा तब श्री गुसांई जी ने बहुत सुन्दर समाधान किया – चतुर्भुज दास जी! कुम्भनदास जी का चित्त किशोरलीला (श्रृंगार रस की लीला) के आवेश में है अतः उन्होंने ऐसा कहा है । वस्तुतः भगवल्लीला में कोई भेद नहीं है।

भगवान् तो अनन्त विरोधी धर्मों के आश्रय हैं। एक ही समय में किशोर भी हैं और बालक भी। हमारे-तुम्हारे अन्दर यह सामर्थ्य नहीं है। कोई बालक है तो बालक ही रहेगा उसी समय किशोर नहीं हो सकता है और किशोर है तो बालक नहीं हो सकता किन्तु प्रभु की यह अचिन्त्य शक्ति है कि वे एक ही समय में अनेक लीलाएं सम्पादित करते हैं। यही तो उनकी सर्वशक्तिमत्ता है। वात्सल्य रस के उपासकों को बाललीला, सख्य रस के उपासकों को सख्यलीला व निकुञ्जोपासकों को निकुञ्ज लीला का दर्शन कराते हैं –

बाल रूप यशुमति मोहिं जाने, गोपिन मिल सुख भोगूं।

(सूर सागर)

भगवान् की किसी भी लीला में सिद्धान्त से भेद नहीं करना चाहिए। भगवल्लीला में सैद्धान्तिक भेद अपराध है । महापुरुषों की आवेश-स्थिति से सर्वथा अनभिज्ञ होने से हम लोग अन्य लीलाओं में अभाव करके अपराध करते हैं।

रस मत्तता के धोखे में हो रहा है अपराध –

श्री बिहारिन देव जी की वाणी –

भक्त साधारण के अपराधहिं काँपत डरनि हियौ।

(विहारिनि देव जी की वाणी-५८)

साधक भक्त के अपराध से भी डरना चाहिए फिर हमलोग भेदवादिता में पड़कर रसिक, आचार्य व गुरुजनों का अपराध कर बैठते हैं।

रसिकजनों की वाणी का मनमाना अर्थोपयोग क्या अपराध नहीं है?

श्री बिहारिनदेव जी कह रहे हैं –

गुरु अपराध डरौ सब कोई।
साधन श्रवन कहा फल लागै गयौ मूल गथ खोई॥
काजर सों काजर न ऊजरौ होइ किन देखौ धोई।
जोई रोग दोस सोई औषद रह्यौ आपकों रोई॥

कृतघन उपकारहि नहिं मानत राखत तन मन गोई।
कपट प्रीति परतीति न उपजै हला भला दिन दोई॥
काचौ कटुक सुभाव बाकसौ (तजै) पाकौ नीबौ मीठौ होई।
आदि मध्य अवसान बिमुखई रह्यौ विषै विष भोई॥
जैसें जारैं अगिन कौ अगिनैं सीतल करैं न तोई।
श्रीबिहारीदास और न उपाय अब श्री गुरु चरन सँजोई॥

(बिहारीदास जी सिद्धान्त के पद-५९)

अर्थात् मूलाचार्यों ने जो कहा, उसे ही धारण करें, परवर्ती बातों को नहीं।

किन्तु

अधम न छाँड़ै अधमई गुरु कितौ पुकारै।
पर की निन्दा करै पतित अपनो ब्रत हारै॥

(विहारिनि देव जी की वाणी-३२)

हम लोग एक-दूसरे के सम्प्रदाय की निन्दा, आचार्य-निन्दा, वाणी-निन्दा जैसा जघन्य अपराध करते हैं और स्वयं को अनन्य रसिक समझते हैं।

बातें कहत बिहार की, गरे पर्‌यौ जंजाल।
महल टहल तैं जाँनिये, कहा बजायै गाल॥

(विहारिनि देव जी की वाणी-३७५)

इस रस की सीमा को छू पाना भी अत्यन्त दुष्कर है।

भगवत रसिक अनन्य, बधू नव गर्भ धरै उर।
सदा सहायक सासु-स्वामियाँ जानौ सतगुर॥

(भगवत रसिक जी की वाणी, निर्विरोध मनरंजन ग्रन्थ-१४)

अनन्य रसिक ही वो वधू हैं, जो अनन्य भक्ति रूपी गर्भ धारण करते हैं एवं सद्गुरु उस सास व पति के समान हैं जो वधू के सर्वदा सहायक हैं।

जिस प्रकार पति के सिद्धान्तों के विरुद्ध चलने वाली स्वेच्छाचारिणी स्त्री का पातिव्रत कभी सिद्ध नहीं होता, उसी प्रकार सद्गुरु के विरुद्ध चलने वाले शिष्य का अनन्य व्रत।

भरता के द्वै भामिनी बसैं, एक ही गाँव।
सेवा साधैं औसरनि, तोरैं पति के पाँव॥
तोरैं पति के पाँव, सौतियारौ सौ मानैं।
ऐसेहिं सब मत बाद, करैं खण्डन मत आनैं॥
आचरज अभिमान, आपकौं मानैं करता।
तजि विरोध नहीं भजैं, आपनौं भगवत भरता॥

(भगवत रसिक जी वाणी, निर्विरोध मनरंजन ग्रन्थ-१५)

एक पति की दो पत्नियाँ पति के एक-एक चरण को अपना मानकर समय-समय से सेवा करते हुए एक चरण को दबायें व दूसरे चरण को सौत का मानकर तोड़ दें और यह भूल जाएं कि दोनों चरण उसी पति के हैं जिसकी वह पत्नी हैं तो यह पति की सेवा है अथवा प्रहार?

ऐसे ही आज सभी मत व सभी वाद अन्यान्य मत-वादों के खण्डन में लगे हैं जबकि समस्त सम्प्रदाय, सम्प्रदायाचार्य, सम्प्रदाय वाणी एक ही परमपति हरि की प्राप्ति का माध्यम हैं। क्या यह अपने इष्ट का विरोध नहीं है?

भूल गये कि सभी सम्प्रदायों का परम-चरम लक्ष्य तो भगवान् ही हैं फिर उसकी प्राप्ति के मार्गों में परस्पर विरोध कैसा?

तभी तो यह रसोपासना का मार्ग सबके सामर्थ्य की बात कहाँ?

कठिन प्रीति रस रीति है समुझि गहो मन मांहि।
एक चकोर पावक चुगै सबहिन कौ भख नांहि॥
जो है जाति चकोर की सोई पावकै खाइ।
और पंछी जो छुवै चोंच सों छुबत जीभ जरि जाइ॥

(श्रीबिहारिनदेव जी वाणी-३९७, ३९८)

चातक ही अंगारा (आग का गोला) चुग सकता है, अन्य तो जीभ जला लेंगे।

** विषय मत्तता **

विषइयों को रस-मत्तता कहाँ?
राति द्यौस झूठहि बोलै साँच न बोलै एक रती।
श्री बिहारीदास यह बड़ो अचँभो बनियाँ भगत बेस्या सती॥

(विहारिनी देव जी की वाणी-६४८)

जिस प्रकार वैश्या के सती होने में कठिनाई है, उसी प्रकार व्यापारी (अर्थ लोलुप) के भक्त होने में।

खेत बिगार्‌यौ खरतुवा सभा बिगारी सूम।
धर्म बिगार्‌यौ लालची ज्यौं केसर मिलै कसूम॥

(विहारिनी देव जी की वाणी-५०४)

लोलुपता ने आज सम्पूर्ण धर्म को निस्सार कर दिया।

प्रेम बिनाँ झखमारत डोलै।

इंद्रिन के सुख स्वारथ आरत बात बनाइ गढै गढि छोलै॥
परमारथ प्रीति न पूजा की रीति पुराँन की पोथी पचीसक खोलै॥
वृंदावन धाम सकाम बसै सठ दै नगु लैत विषै खरि तौलैं॥
श्रीबिहारीविहारिनिदासि बिस्वास न प्रेम बिनाँ झखमारत डोलै॥

(श्री विहारिनिदास जी की वाणी १०६)

इन्द्रिय सुखपूर्ति के लिए घूमने वाले कहीं रसिक हो सकते हैं भला!

विषईन कौ जल अन्न लै खाएँ बिषई होइ।
काम क्रोध घरू भरि रहै भाजति भक्ति बिगोइ॥
हत्या करत सबै डरैं हत्यारेहि डराहिं।
बड़े हत्यारे जांनियै जे हत्यारे के खाँहि॥
हत्या खाई पेट भरि भूख भक्ति गई भागि।
श्रीबिहारीदास बिन तामसी बढयौ बैरु अरु आग॥

(श्री विहारिनिदास जी की वाणी १०६)

विषइयों का संग तो दूर विषइयों का अन्न भी खाया तो विषयी बन जाओगे। एक बार के अन्न-दोष से श्रीनागरीदासजी को युगल का लीला-दर्शन बंद हो गया।

रस-मत्तता के धोखे में अपराध

'रसीली ब्रजयात्रा, भाग – २' से संग्रहीत

संकलनकर्त्री- साध्वी नवीनाश्रीजी , मानमन्दिर, बरसाना

आज समाज वैष्णवी माया से ग्रस्त है।

क्या है वैष्णवी माया ?

संकीर्णता ही वैष्णवी माया है। संकीर्णता एकमात्र अपराध का मार्ग है, जिससे भगवत्पार्षद जय-विजय को वैकुण्ठ से मर्त्यलोक में आना पड़ा अतः इस धोखे में न रहें कि महापुरुषों को अपराध नहीं लगता है।

ब्राह्मणः समदृक् शान्तो दीनानां समुपेक्षकः।
स्रवते ब्रह्म तस्यापि भिन्नभाण्डात्पयो यथा॥

(भा. ४/१४/४१)

ऐसा ब्राह्मण जिसने ब्रह्म को जान लिया है, समदर्शी है, शान्त है, यदि दीनों की उपेक्षा करता है तो उसका ब्रह्मतेज भी इस प्रकार स्रवित हो जायेगा जैसे फूटे घट से जल।

भगवान् तो अधनात्मधन हैं, दीनों से प्रेम करने वाले दीनबन्धु हैं। उन्हें दीन अतिशय प्रिय हैं।

एहि दरबार दीन को आदर, रीति सदा चलि आई।
रघुवर रावरि इहै बड़ाई।

(तुलसी विनय पत्रिका-१६५)

जहाँ थोड़ा शास्त्र ज्ञान हुआ, धन बढ़ा, अच्छे कुल (आचार्य कुल) में जन्म हो गया, कुछ अच्छे कर्म बन गये फिर वह मदोन्मत्त होकर भगवान् के अकिञ्चन भक्तों की उपेक्षा, तिरस्कार करने लगता है। ऐसे दुर्मदों की पूजा को भगवान् कभी स्वीकार नहीं करते हैं।

जबकि भाव यह होना चाहिए, श्री हिताचार्य महाप्रभु कहते हैं –

"पाये जान जगत में जेते"

संसार के जितने जीव हैं, सबको श्यामा-श्याम प्राप्त हैं, एक मैं ही ऐसा क्षुद्रतम जीव हूँ जो इससे वंचित हूँ।

यही श्रद्धा वैष्णवी माया व वैष्णवापराध से बचायेगी अन्यथा जिन राजा चित्रकेतु को भगवान् संकर्षण के दर्शन हो गये, पार्षद स्वरूप की प्राप्ति हो गई, अव्याहत गति प्राप्त हो गई, इतने पर भी भागवतों की महिमा को नहीं समझ पाये व परम वैष्णव शंकर जी में दोषबुद्धि कर अपराध कर बैठे।

यत्पादपङ्कजपरागनिषेवतृप्ता
योगप्रभावविधुताखिलकर्मबन्धाः।
स्वैरं चरन्ति मुनयोऽपि न
नह्यमाना स्तस्येच्छयाऽऽत्तवपुषः कुत एव बन्धः॥

(भा. १०/३३/३५)

श्रीशुकदेवजी के मतानुसार साधन, कर्म व अपराधों का प्रतिफल तो नित्यधाम में है ही नहीं। भगवच्चरणकमलों के रज-सेवन से तृप्त होकर व भगवद्योग के प्रभाव से वे

भक्त अपने समस्त कर्मबंधनों से मुक्त होकर स्वच्छन्द विचरण करते हैं।

प्रायेण मुनयो राजन् निवृत्ता विधिषेधतः।
नैर्गुण्यस्था रमन्ते स्म गुणानुकथने हरेः॥

(भा. २/१/७)

उनके विधि-निषेधात्मक समस्त कर्म यहीं समाप्त हो जाते हैं, और उन्हें कर्म-बन्धन नहीं होता है।

कुशलाचरितेनैषामिह स्वार्थो न विद्यते।
विपर्ययेण वानर्थो निरहंकारिणां प्रभो॥

(भा. १०/३३/३३)

कहाँ तक कहें, पूर्वाभ्यास से वह सहज ही भगवान् की ओर आकृष्ट होता है एवं सच्ची जिज्ञासा उत्पन्न होने पर शब्द ब्रह्म अर्थात् विधि-निषेध से अतीत हो जाता है। विधि-निषेधात्मक बन्धन समाप्त होने का आशय वह शास्त्रातीत हो जाता है।

पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मति वर्तते॥

(गी. ६/४४)

भगवज्जिज्ञासा में ही शास्त्र निवृत्त हो जाता है और फिर तो विपर्यय-कर्मों का बन्धन भी उसे नहीं लगता है।

रसानुभूति के बाद तो **'स्वैरं चरन्ति मुनयो'** – वह स्वच्छन्द विचरण करने लगता है किन्तु ध्यान रहे, लीलापराध अथवा महद् अपराध नित्यधाम में भी अक्षम्य होता है और इस नियम का चिन्मयी प्रकृति भी पालन करती है।

महदतिक्रमणशङ्कितचेता
मन्दमन्दमनुगर्जति मेघः।
सुहृदमभ्यवर्षत् सुमनोभि
श्छायया च विदधत् प्रतपत्रम्॥

(भा.१०/३५/१३)

वन में श्रीकृष्ण के वेणु बजाने पर महद् अपराध की आशंका से मेघ भी मंद-मंद वंशी के स्वर और ताल के साथ गरजते हैं।

अतः नित्यपरिकर में भी लीलापराध से शापादि देखे जाते हैं। जैसे जय-विजय का हिरण्याक्ष-हिरण्यकशिपु बनना, श्रीदामा का शंखचूड बनना। तत्समस्त लीलाओं का उद्देश्य भी लोकशिक्षा होता है। भगवल्लीला अनुग्रहरूपिणी है अतएव रसिकों ने साधारण भक्त के अपराध से भी सावधान किया है।

भक्त साधारण के अपराधहिं काँपति डरनि हियो।

(श्री बिहारिनदेव जी-सिद्धांत के पद-५८)

ऐसी रसिकता किस काम की जो आसुरी भाव को प्राप्त करा दे, यहाँ तक कि साक्षात् निकुञ्ज भवन में पहुँचने के बाद भी लीलापराध, महद् अपराध से अत्यधिक सावधान रहें।

यों बोलियै न डोलियै टहल महल की पाइ।
श्री बिहारिनदास अंग संगनी कहत सखी समुझाइ॥

(श्रीबिहारिनदेव जी की वाणी-१०५)

साक्षात् निकुञ्ज-महल की सेवा भी प्राप्त हो जाये तो वहाँ सावधानी से बोलना, डोलना अन्यथा अपराध हो जाएगा। ललिता जी के अपराध से ही स्वयं उद्धव जी को नित्यधाम से आना पड़ा, सूरदास बने। स्वयं महासखी ललिता भी उद्धव-अपराध से म्लेच्छ-कन्या बनीं।

स्वास समुझि सुर बोलियै डोलि नैन की कोर।
मैननि चैन न पावही बिहरें युगल किसोर॥

(श्रीबिहारिनदेव जी की वाणी-१०६)

यहाँ युगल की स्वांस के सुर में ही बोलना व नेत्रों के संकेत पर ही डोलना (चलना) अन्यथा अपराध बन बैठेगा। उच्छृंखलता में अपराध होता है।

निष्किञ्चन भक्तों के अपराध से होती है **** विषयों में प्रवृत्ति *****

आज संसार में प्रायः भोगवाद का दर्शन हो रहा है। इसका कारण है – भक्तापराध। मत्स्य भक्षण करने पर सौभरि ऋषि ने गरुड़ को शाप दे डाला। आज के बाद यहाँ आने पर तुम्हारा प्राणान्त हो जायेगा। यद्यपि यह शाप मत्स्यों के क्षेम के लिये दिया गया था किन्तु इससे ऋषि को अपराध लगा। जिसके परिणाम में उन्हें भोगेच्छा जाग गयी एवं राजा मान्धाता की पचास

कन्याओं से पचास रूप धारण करके विवाह किये। यह शाप अनुचित था, संसार में सभी जीवभोजी हैं।

अहस्तानि सहस्तानामपदानि चतुष्पदाम्।
फल्गूनि तत्र महतां जीवो जीवस्य जीवनम्॥

(भा. १/१३/४६)

हाथ वालों के बिना हाथ वाले, चार पैर वालों के बिना पैर वाले, तृण, पत्रादि एवं बड़े जीवों के छोटे जीव आहार हैं अतः एक जीव दूसरे जीव का भोजन है। इसी प्रकार गरुड़ का भोजन मत्स्य है किन्तु भगवद्भक्तों की महत्ता को ध्यान में न रखते हए तपो मद में ऋषि ने गरुड़ को शाप दे डाला। इस वैष्णवापराध से उन्हें पतित होना पड़ा।

नूनं विमुष्टमतयस्तव माययाते
ये त्वां भवाप्ययविमोक्षणमन्यहेतोः।
अर्चन्ति कल्पकतरुं कुणपोपभोग्य-
मिच्छन्ति यत्स्पर्शजं निरयेऽपि नृणाम्॥ (भा. ४/9/9)

साधक हो अथवा सिद्ध, नरक में भी प्राप्त होने वाले कुणपोपभोग्य पदार्थों की जो इच्छा करता है वो नारकीय है। यह वैष्णवापराध का ही दण्ड था कि महान तपस्वी ऋषि को विषय सुख की लालसा जाग गई।

कैसे बचें भक्तापराध से ?

'रसीली ब्रजयात्रा, भाग – २' से संग्रहीत

संकलनकर्त्री- साध्वी वत्सलाजी , मानमन्दिर, बरसाना

स्वयं श्रीभगवान् ने कहा है –

ये ब्राह्मणान्मयि धिया क्षिपतोऽर्चयन्त-
स्तुष्यद्धृदः स्मितसुधोक्षितपद्मवक्त्राः।
वाण्यानुरागकलयाऽऽत्मजवद्
गृणन्तःसम्बोधयन्त्यहमिवाहमुपाहृतस्तैः॥

(भा. ३/१६/११)

भक्त यदि कटु शब्द (गाली) भी कह दें अथवा किसी प्रकार का दुर्व्यवहार या ताड़ना भी दे दें तो उसकी उपेक्षा करके मुस्कान रूपी अमृत सिंचन व कमल वक्त्र से अनुरागभरी वाणी के द्वारा भक्त को प्रसन्न करना, न कि प्रतिकार।

उपाहृत (उप अर्थात् समीप, आहृत अर्थात् खींचकर लाये जाते हैं) अर्थात् भक्तसेवी भगवान् को अतिशीघ्र अपनी ओर खींच लाता है अतः स्वामीजी की वाणी में –

कै हित कीजै कमलनयन सों,
कै हित कीजै साधु संगति से। (अष्टादशसिद्धान्त के पद-७)

अथवा

प्रथम भगति सन्तन्ह कर संगा।

(रा.च.मा.अरण्य. ३५)

अथवा

पहले रसिक जनन को सेवे।

(महावाणीसिद्धान्त सुख-३१)

'भक्तसेवा' से देवदुर्लभ वैभव, योगि-दुर्लभ सिद्धि देवहूति जी को प्राप्त हुई।

भक्तद्रोह का परिणाम भी समझ लें –

आयुः श्रियं यशो धर्मं लोकानाशिष एव च।
हन्ति श्रेयांसि सर्वाणि पुंसो महदतिक्रमः॥ (भा. १०/४/४६)

जीवन-शक्ति का ह्रास होता है, मृत्यु तक हो जाती है, कल्याण के सभी साधन व द्वार बन्द हो जाते हैं। इसी भक्तद्रोह से आज समाज दुर्बल हो गया।

यस्यामृतामलयशःश्रवणावगाहः
सद्यः पुनाति जगदाश्वपचाद्विकुण्ठः।
सोऽहं भवद्भ्य उपलब्धसुतीर्थकीर्ति-
श्छिन्द्यां स्वबाहुमपि वः प्रतिकूलवृत्तिम्॥

(भा. 3/16/6)

मेरा निर्मल यश श्रवणकर चाण्डाल पर्यन्त सम्पूर्ण जगत अनुक्षण पवित्र हो जाता है।

यह जगत पावनी शक्ति मुझे भक्तों से ही प्राप्त हुई है, ऐसे उन भक्तों का अपराध यदि मेरी भुजा भी करेगी तो तुरन्त ही इसे काट कर दण्डित करूँगा। जो भक्तवत्सल भगवान् भक्तों के प्रतिकूल कार्य करने पर अपनी भुजाओं को ही काट डालने का संकल्प रखते हैं तब वे

हम वैष्णव-विद्वेषियों पर कैसे कृपा करेंगे? फिर हम जैसे साधारण प्राणी वैष्णवापराध करने में थोड़ा भी नहीं हिचकते हैं किन्तु इसका परिणाम कितना भीषण हो सकता है। भगवान् भी स्वयं में जगत-पावनी-शक्ति का अनुभव भक्तों के कारण ही करते हैं।

यत्सेवया चरणपद्मपवित्ररेणुं सद्यः
क्षताखिलमलं प्रतिलब्धशीलम्।
न श्रीर्विरक्तमपि मां विजहाति यस्याः
प्रेक्षालवार्थ इतरे नियमान् वहन्ति॥

(भा. 3/16/7)

यह जगत-पावनी-शक्ति व साक्षात् महालक्ष्मी से भी असंगता उन्हें भक्त-सेवा से ही प्राप्त हुई है।

नाहंतथाम्मियजमानहविर्विताने
श्च्योतद्घृतप्लुतमदन् हुतभुङ्मुखेन।
यद्ब्राह्मणस्य मुखतश्चरतोऽनुघासं
तुष्टस्य मय्यवहितैर्निजकर्मपाकैः॥

(भा. ३/१६/८)

यज्ञ में निरन्तर दी जा रही घृताहूतियों से भी प्रभु इतने सन्तुष्ट नहीं होते हैं जैसा कि निष्काम भक्त के भोजन करने पर, उसके मुख में गये प्रत्येक ग्रास पर उन्हें परम सन्तोष का अनुभव होता है। इससे विपरीत –

जो अपराध भगत कर करई।
राम रोष पावक सो जरई॥

(रा.च.मा.अयो. २१८)

वैष्णवापराधी को तो निश्चित ही भगवान् की क्रोधाग्नि में जलना पड़ेगा अतः अनन्यता के आवरण में परस्पर ईर्ष्यापरायण समाज को प्रभु के कोप से बचना चाहिए।

एक बार कुलीन ग्रामवासी भक्तों ने श्रीमच्चैतन्यदेव से जिज्ञासा की – वैष्णव का क्या लक्षण है? एक बार भी जिसने कृष्ण नाम लिया, वह वैष्णव है – श्रीमन्महाप्रभु जी ने कहा किन्तु इस प्रकार तो मनुष्य मात्र वैष्णव है क्योंकि ऐसा कोई मनुष्य नहीं होगा जिसने एक बार भी भगवन्नाम का उच्चारण न किया हो। पूर्ण सन्तोष न होने पर उन्होंने पुनः वही प्रश्न किया – वैष्णव कौन है? जो निरन्तर कृष्ण नाम लेता है, वह वैष्णव है, श्रीमन्महाप्रभु जी ने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया किन्तु सतत् नाम जप करने वाले भी कल्मषरहित नहीं हो पाते हैं। लाख-लाख नाम जप कर रहे हैं और बगल में रहनेवाले साधकों से बोलचाल नहीं है अतः आवश्यक नहीं है कि निरन्तर नाम जप करने वाला भी प्रधान वैष्णव है।

तृतीय बार वैष्णव का लक्षण पूछे जाने पर श्रीमन्महाप्रभु जी ने कहा –

जाहार दर्शने मुखे आइये कृष्णनाम।
ताहारे जानिय तुम वैष्णव प्रधान॥

(चै.च.मध्यलीला/षोडश परिच्छेद /७३)

जिसके दर्शनमात्र से मुख में श्री कृष्णनाम स्फुरित हो उठे, वही प्रधान वैष्णव है। कथनाशय एक नाम लेने वाला भी वैष्णव है।

श्रीगोस्वामी तुलसीदास जी की दृष्टि में –

तुलसी जाके मुखन ते धोखेहु निकसत राम।
ताके पग की पगतरी मोरे तन को चाम॥

रसिकों की भी आज्ञा है – साधारण भक्तों के अपराध से भी सावधान रहो।

अपराधहिं कांपत डरनि हियो॥

(विहारिनि देव जी की वाणी-५८)

यन्नामधेयश्रवणानुकीर्तनाद्
यत्प्रह्वणाद्यत्स्मरणादपि क्वचित्।
श्वादोऽपि सद्यः सवनाय कल्पते
कुतः पुनस्ते भगवन्नु दर्शनात्॥

(भा. ३/३३/६)

जिसकी जिह्वा पर भगवन्नाम विराजमान हो गया, वह चाण्डाल होते हुए भी आदर के योग्य है। (भा. ३/२/२४)

मन्येऽसुरान्भागवतांस्त्र्यधीशे संरम्भमार्गाभिनिविष्टचित्तान्।
येसंयुगेऽचक्षत ताक्ष्र्यपुत्रमंसेसुनाभायुधमापतन्तम्॥

श्री उद्धवजी की दृष्टि में तो भगवान् से युद्ध करने वाले भी भागवत (वैष्णव) हैं। वस्तुतः निष्ठा तो यही है। सबमें अभेद दृष्टि ही वैष्णवता है फिर एक दूसरे सम्प्रदाय की वाणी-पोथी न पढ़ना, मन्दिरों में न जाना, एक-दूसरे

आचार्यों की वाणी न गाना – यह महापाप ही है। यहाँ तक कि बहुत से सम्प्रदायानुयायी श्री मीरा जी के पद नहीं गाते। इसलिए कि वह किसी सम्प्रदाय विशेष के अनुगत नहीं थीं। कोई कहता है मीरा ने भगवान् को विष का भोग लगाया जो सर्वथा अनुचित था, कोई कहता है कि श्रीनाथजी के सेवाधिकारी कृष्णदासजी ने भी मीरा जी को आदर की दृष्टि से नहीं देखा। यह सत्य है अथवा झूठ, भगवान् जानते हैं किन्तु इतना अवश्य है कि एक भक्त दूसरे भक्त का अपराध नहीं कर सकता है।

स्वयं श्रीनाभा जी महाराज भक्तमाल जी में कह रहे हैं कि कलिकाल में गोपी-प्रेम को दिखाने वाली श्री मीरा जी ही हुई हैं।

लोकलाज कुल श्रृंखला तजि मीरा गिरिधर भजी ॥
सदृश गोपिका प्रेम प्रगट कलिजुगहिं दिखायौ।
निरअंकुश अति निडर रसिक जस रसना गायौ ॥
दुष्टनि दोष विचारि मृत्यु को उद्यम कीयौ।
बार न बाँकौ भयौ गरल अमृत ज्यौं पीयौ ॥
भक्ति निसान बजायकै काहू ते नाहिन लजी ।

(भक्तमाल) भक्तिमती मीराबाई के निन्दक दोषद्रष्टा कैसे साधु, कैसे वैष्णव और कैसे रसिक हैं ? हम मीरा के पद नहीं गाते हैं, यह किसी भक्त की अथवा रसिक की वाणी नहीं हो सकती है। महापुरुषों की वाणी का खण्डन, नामापराध है ।

अनन्यता

'रसीली ब्रजयात्रा, भाग – २' से संग्रहीत
संकलनकर्त्री- साध्वी रमाजी, मानमन्दिर, बरसाना

नारद जी की वाणी में –

अन्याश्रयाणां त्यागो अनन्यता ॥ (ना.भ.सू. १०)

अर्थात् अन्याश्रय परित्याग पूर्वक मन की एकनिष्ठ वृत्ति का नाम ही 'अनन्यता' है। बाह्य क्रियाओं को सीमित करना अनन्यता नहीं है।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।

(गी. ९/२२)

मन से अनन्य चिन्तन ही अनन्यता है अतः भगवान् ने कहा –

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय ।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः ॥

(गी. १२/८)

मन मुझको दे दो फिर सभी क्रियायें अनन्यता की होगीं। मन देने का अभिप्राय मन की सभी वृत्तियों से है।

एकादशासन्मनसो हि वृत्तय आकूतयः पञ्च धियोऽभिमानः ।
मात्राणि कर्माणि पुरं च तासां वदन्ति हैकादश वीर भूमीः ॥
गन्धाकृतिस्पर्शरसश्रवांसि विसर्गरत्यर्त्यभिजल्पशिल्पाः ।
एकादशं स्वीकरणं ममेति शय्यामहं द्वादशमेक आहुः ॥

(भा. ५/११/९,१०) मन की ग्यारह वृत्तियाँ हैं। पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेन्द्रिय और एक अहंकार। ये मन की ग्यारह वृत्तियाँ हैं। वृत्ति अर्थात् बरतना, ग्यारह प्रकार से मन बर्तता है।

सभी वृत्तियों का जहाँ पर्यवसान है, वह है – अहम्। इन ग्यारह वृत्तियों की ग्यारह आधार भूमियाँ हैं, (जहाँ ये वृत्तियाँ खड़ी होती हैं।) शब्द, स्पर्श, रस, रूप व गन्ध – ज्ञानेन्द्रिय के विषय हैं। मलत्याग, रति, गमन, भाषण, आदान-प्रदान – ये कर्मेन्द्रिय के विषय हैं। शरीर को 'यह मेरा है' कहकर स्वीकार करना – अहंकार का विषय है। कुछ लोग अहंकार को मन की बारहवीं वृति और उसके आश्रय शरीर को बाहरवाँ विषय भी मानते हैं।

मन का अनन्य चिन्तन ही अनन्यता है।

हम लोग बाह्य क्रियाओं को अधिक महत्त्व देते हैं, चिन्तन पर ध्यान न देकर मात्र उपासना की पद्धति पकड़ लेते हैं, मन तो इधर-उधर दौड़ता ही रहता है। चिन्तन की अनन्यता के बिना उपासना सिद्ध नहीं होगी क्योंकि उपासना भी मन से होती है एवं चिन्तन भी मन से ही होने वाली क्रिया है।

"रसखान गोविन्दहिं यों भजिये
जिमि नागरि को चित गागरि में।" (रसखान)

अपना रंग सखिन सौं रांचै कर छोड़े बतराये,
या विधि मन को लगाये प्रभु पाये।

(श्रीकबीरदास जी)

इतना सावधान चिन्तन चाहिए – शीश पर मांट है और हाथ छोड़कर सखी-सहेली से बात कर रही है किन्तु एक बूँद जल नहीं छलक सकता है।

या दोहनेऽवहनने मथनोपलेपप्रेङ्खेङ्खनार्भरुदितोक्षणमार्जनादौ।
गायन्ति चैनमनुरक्तधियोऽश्रुकण्ठ्यो धन्या व्रजस्त्रिय उरुक्रमचित्तयानाः॥

(भा. १०/४४/१५)

चिन्तन की इसी सावधानी से तो गोपियों का गोबर थापना, दूध दुहना, दधि मथना जैसा सामान्य कार्य भी भक्तियोग बन गया।

पूजां दधुर्विरचितांप्रणयावलोकैः॥

(भा. १०/२१/११)

हिरणियों का दौड़ना व कृष्ण को निहारना भी भक्तियोग बन गया।

येनैवारभते कर्म तेनैवामुत्र तत्पुमान्।
भुङ्क्ते ह्यव्यवधानेन लिङ्गेन मनसा स्वयम्॥

(भा. ४/२९/६०)

क्योंकि कर्म करने वाला मन ही है अतः मन की अनन्यता ही वास्तविक अनन्यता है।

श्री हिताचार्य की वाणी में –

यह जु एक मन बहुत ठौर करि कहि कौने सचु पायौ।
जहाँ-तहाँ बिपति जार जुबती लौं प्रगट पिंगला गायौ॥
द्वै तुरंग पर जोर चढ़त हठ परत कौन पै धायौ।
कहि धौं कौन अंक पर राखै जो गनिका सुत जायौ॥
जै श्री हित हरिवंश प्रपञ्च बंच सब काल ब्याल कौ खायौ।
यह जिय जानि श्याम-श्यामा पद-कमल संगी सिर नायौ॥

(हित चौरासी पद सं. ५९)

एक मन को अनेक जगह देने से सुख कहाँ मिल सकता है, यही तो श्रीमद्भागवत में पिंगला वेश्या ने गाया है। अरे, कहीं दो घोड़ों पर चढ़कर एक साथ सवारी की जा सकती है। जैसे वेश्या का पुत्र स्वयं निश्चय नहीं कर पाता है कि मैं किसका पुत्र हूँ, उसी प्रकार भगवान् के अतिरिक्त अन्यत्र मन देने वाले व्यभिचारी हैं, वेश्या-पुत्र हैं, रसिक नहीं।

अन्य से हटे और रसिक बने।

मन एक ही स्थान पर रहे, मन का जगह-जगह भटकना व्यभिचार है। अव्यभिचारिणी भक्ति ही अनन्य भक्ति है।

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी।
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि॥

(गी.१३/१०)

एक इन्द्रिय को संयमित कर शेष वृत्तियों से उपभोग करना व्यभिचार है। स्वर्ण व पीतल, दोनों का पीलापन देखने में बहुत समान होता है किन्तु क्या दोनों में समानता हो सकती है? इसी प्रकार अनन्यता-संकीर्णता को समझें।

श्रीकृष्ण का मत –

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥

(गी. ७/१९)

पुनः

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥

(रा.च.मा.बाल. ८)

सर्वत्र अपने इष्ट को देखना ही अनन्यता है। यदा-कदा अपवाद भी दिखाई पड़ता है परन्तु यह उनके भाव की विशेष स्थिति है, क्योंकि वे अन्यत्र अभाव नहीं रखते। कुछ लोग कहते हैं कि केवल गुरुमन्त्र जपना ही अनन्यता है, कुछ कहते हैं अपने सम्प्रदाय की वाणी का पाठ ही अनन्यता है, कुछ कहते हैं निकुञ्ज -लीला का गान ही अनन्यता है। ये सभी बातें सत्य हैं। अब जैसे रसिकाचार्य श्रीसेवक जी की वाणी में प्राप्त होता है –

"वंश बिना हरि नाम न लैहौं।"

हम वंश के बिना हरिनाम भी नहीं लेंगे। "हरिवंश" ही कहेंगे।

इसी प्रकार "दास बिना हरिनाम न लैहौं" किन्तु श्री सेवकजी जैसी अनन्य स्थिति सबकी तो नहीं है। सामान्य भाव होने से आचार्यवाणी में संकीर्णता लाकर हमलोग तो अपराधग्रस्त ही होंगे। सामान्य व्यक्ति इन पंक्तियों को पढ़-सुनकर मात्र भेदवाद रूप अपराध का मार्ग ही पकड़ेगा, जबकि ये सब बातें उत्तम निष्ठा के

कारण कही गई हैं कि भावना में भेद न आये और अपनी निष्ठा चलती रहे और हम मन्दमति लोग निष्ठा की बातों को संकीर्ण बना देते हैं।

नारदजी ने श्रीरामजी से याचना की –

जद्यपि प्रभु के नाम अनेका।
श्रुति कह अधिक एतें एका॥
राम सकल नामन्ह ते अधिका।
होउ नाथ अघ खग गन बधिका॥

(रा.च.मा.अरण्य. ४२)

'राम नाम सभी नामों से बढ़कर हो जाये।' अब यह याचना भेद के कारण नहीं, निष्ठा के कारण की गई है।

ये ही नारदजी आगे 'नारदपञ्चरात्र' बनाते हैं, द्वारिका जाते हैं, श्रीकृष्ण से सत्संग करते हैं, निमि-योगेश्वर सम्वाद के माध्यम से वसुदेवजी को कृष्ण-भक्ति सिखाते हैं, ब्रज में आते हैं, गोपियों से सत्संग करते हैं। एक ओर वह राम नाम को सर्वश्रेष्ठ कहते हैं, दूसरी ओर कृष्णभक्ति को सर्वश्रेष्ठ कह रहे हैं।

अब इससे क्या समझें?

निष्ठा एक स्थान पर होते हुए भी अन्यत्र अभाव न उत्पन्न हो, सर्वत्र भाव बना रहे, यही **अनन्यता** है। अन्यत्र अभाव हुआ तो अनन्यता संकीर्णता के रूप में बदल जायेगी। यथा – श्री हरिराम व्यास जी महाराज का श्री कबीरदास जी के प्रति कुछ अभाव हुआ और भगवद्दर्शन बन्द हो गया।

संकीर्णता से बचें क्योंकि यह अपराध मार्ग है। भगवद्धाम से भी पतन हो जाएगा।

जे अपराध परम पद हू ते
उतरि नरक में परिबो।
हरि भक्तन सों गरब न करिबो॥ (श्री कृष्णदास जी)

जय-विजय ने जब सनकादिक मुनियों का अपराध किया तो उन्हें नित्यधाम से भी नीचे आना पड़ा।

तद्वाममुष्य परमस्य विकुण्ठभर्तुः कर्तुं प्रकृष्टमिह धीमहिमन्दधीभ्याम् लोकानितोव्रजतमन्तरभावदृष्ट्या पापीयसस्त्रय इमे रिपवोऽस्य यत्र॥

(भा. ३/१५/३४)

सनकादिक मुनि बोले – भगवान् के पार्षद होकर भी मन्दधी बने हुए हो अतः तुम्हारे कल्याणार्थ इस अपराध के योग्य हम तुम्हें दण्ड दे रहे हैं। तुम उन पाप योनियों में जाओ जहाँ जीव को काम, क्रोध, लोभ घेरे हुए हैं। अभावदृष्टि का परिणाम है – काम, क्रोध, लोभादि विकारों का आना। बिना अपराध के ज्वर भी नहीं आ सकता है फिर विकारों का आना तो दूर । अपने इष्ट में भाव एवं अन्यत्र अभाव, यह अपराध है। अन्याश्रय से अनन्यता नष्ट हो जाती है।

.....

भागवत धर्म में सर्वाधिकार

'रसीली ब्रजयात्रा, भाग – २' से संग्रहीत

संकलनकर्त्री- साध्वी हरिगीताजी, मानमन्दिर, बरसाना

लगभग २००० वर्षों की पराधीनता के बाद राजनैतिक रूप से १५ अगस्त, १९४७ को स्वतन्त्र हो जाने के बाद भी सांस्कृतिक रूप से अपनों की ही पराधीनता से मुक्त होने की तो कोई सम्भावना भी दिखाई नहीं दे रही है।

आज इस देश के संकीर्ण विचारकों के द्वारा जो देश व संस्कृति का संकुचन हुआ और अनवरत हो रहा है, वह तो विधर्मी आक्रान्ताओं के द्वारा लाखों वर्षों तक यहाँ लूट-पाट, तोड़-फोड़, कत्लेआम किये जाने पर भी नहीं हो सकता था।

विशेषतः आज धर्म के नगाड़े बजाने वाले ही भगवद्वाणी, भगवद्रूपा आचार्यों की वाणी को सर्वथा भूल गये हैं। भूल गये कि भगवान् श्रीरामके वन-वनान्तर-भ्रमण का कारण केवट, शबरी एवं जटायु पर कृपा करना ही था। इस वन भ्रमण का उद्देश्य असुरों का वध नहीं था क्योंकि यह तो मात्र उनकी संकल्प शक्ति से भी हो

सकता था। पुनः कलिकाल में श्री रामानन्दाचार्य जी के रूप में महान विद्वानों की भूमि "काशी" में उद्घोष किया –

सर्वे प्रपत्तेरधिकारिणः सदा शक्ता अशक्ता अपि नित्यरङ्गिणः।

अपेक्ष्यते तत्र कुलं बलं च नो न चापि कालो नहि शुद्धता च॥ (वैष्णव मताब्ज भास्कर)

संसार में सबको भगवद्शरणागति का अधिकार है, चाहे वह समर्थ हो अथवा असमर्थ। क्योंकि भगवद्शरणागति में न श्रेष्ठ कुल की अपेक्षा है न अत्यधिक बल की ही, न उत्तम काल की आवश्यकता है, न किसी शुद्धि की ही। प्राणीमात्र शुचि-अशुचि सभी अवस्था में सभी काल में भगवद्शरणागति ग्रहण कर सकता है।

श्री सूरदास जी ने भी कहा –

हरि, हरि, हरि, सुमिरौ सब कोइ।

नारि-पुरुष हरि गनत न दोइ॥ (सूर विनय पत्रिका-१४७)

सनातन धर्म के इस सूर्य स्वरूप सिद्धान्त पर ग्रहण लगाने वाले राहु-केतु स्वरूप आज के संकीर्ण विचारक सर्वथा त्याज्य हैं। भूल गये कि जगद्गुरू श्री स्वामी रामानन्द जी ने रैदास (जो कि चमार थे) को भी शिष्य बनाया था जो कलिकाल की गोपी मीरा के गुरू हुए।

कर्मकाण्ड प्रधान दक्षिण भारत की भूमि में प्रकट हुए शेषावतार श्री रामानुजाचार्य जी कावेरी स्नान के लिए जाते समय एक विप्र के कंधे का सहारा लेते एवं लौटते समय धनुर्दास के कंधे पर हाथ रखकर आते, इससे अन्य ब्राह्मण शिष्यों को बड़ा रोष होता। स्नान को जाते हुए तो ब्राह्मण का स्पर्श और लौटते हुए शूद्र का स्पर्श! राम, राम, राम! ये तो आचरण भ्रष्ट हो गये हैं। बाद में श्री रामानुजाचार्य जी ने उन द्वेषियों को श्री धर्नुधरदास जी के भक्ति, त्याग एवं वैराग्यमय उदात्त व्यक्तित्व से अवगत कराया।

खेद है कि आज अपने ही धर्मग्रन्थों की वाणी व भावना को यथार्थ रूप से न समझने वाले मनमुखी ज्ञानाभिमानी अज्ञानी लोग संकीर्णता का ध्वज हाथ में लिये अपने ही धर्म को खण्ड-खण्ड करने को खड़े हैं।

भारतीय आर्य संस्कृति में अनेकानेक स्त्रियाँ जैसे देवहूति, सुनीति, सती, मदालसा, सुबुद्धिनी, ब्रज की गोपी, रतिवन्ती, अरुन्धती, अनसूया, लोपामुद्रा, सावित्री, गार्गी, शाण्डिली, गणेशदेई, झालीरानी, शुभा, शोभा, कुन्ती, द्रोपदी, दमयन्ती, सुभद्रा, प्रभुता, उमा भटियानी, गोराबाई, कलाबाई, जीवाबाई, दमाबाई, केशीबाई, बाँदरानी, गोपालीबाई, मीराबाई, कात्यायनी, मुक्ताबाई, जनाबाई, सखूबाई, सहजोबाई, करमैतीबाई, रत्नावती, कुँअरानी, कान्हूपात्रा, चिन्तामणि, पिंगला, हम्मीर, सूर्य परमाल, सरदारबाई, लालबाई, वीरमती, विद्युल्लता, कृष्णा, चम्पा, पद्मा, संघामित्रा, अहिल्याबाई आदि के रूप में आदर्श माता, आदर्श भगिनी, आदर्श पत्नी, आदर्श पुत्री, आदर्श रानी, आदर्श वीरांगना, आदर्श राजनीति निपुणा, आदर्श कार्यकुशला, आदर्श ब्रह्मवादिनी, आदर्श वक्त्री की भूमिका निभाती रही हैं। आज यदि ये न होतीं तो भारतीय आर्य संस्कृति में आदर्श स्त्रियों का स्थान शून्य ही रह जाता।

आज कोई स्त्री धर्म प्रचारिका बन जाती है तो इसका खण्डन करने भारत के ही संकीर्ण धर्म प्रचारक खड़े हो जाते हैं।

आर्यमेदिनी के युगप्रवर्तक धर्मप्रचारक तो थे स्वामी विवेकानन्द, नारी शक्ति के प्रति जिनके उदात्त विचार आज के प्रत्येक धर्म प्रचारक को पढ़ने चाहिए।

स्वामी जी का 'women of india' नामक ग्रन्थ एवं नारी शक्ति सम्बन्धी आपके अन्य सुन्दर विचारों का संग्रह 'our women' पुस्तक रूप में प्रकाशित है।

आज के युग में स्त्रियों को किस प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता है, एक शिष्य के इस प्रकार पूछे जाने पर स्वामी जी ने कहा – छात्राओं को जीवन में सीता, सावित्री, दमयन्ती, लीलावती और मीराबाई का चरित्र सुना-पढ़ाकर अपने जीवन को इसी प्रकार समुज्ज्वल करने का उपदेश दें, इसके साथ ही शिल्प, विज्ञान, गृहकार्य एवं सुरक्षा की शिक्षा भी आवश्यक है।

मेरी इच्छा है कि कुछ बालक ब्रह्मचारी एवं बालिकाओं को ब्रह्मचारिणी बनाकर उनके द्वारा देश-देश, गाँव-गाँव में जाकर अध्यात्म का प्रसार कराया जाये। ब्रह्मचारिणियाँ स्त्रियों में अध्यात्म विद्या का प्रसार करें।

वर्तमान युग में तो स्त्रियों को यंत्र ही बना दिया गया है। राम! राम! राम! क्या ऐसे ही भारत का भविष्य उज्ज्वल होगा?

शिष्य – किन्तु गुरुदेव! भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास में स्त्रियों के लिए कोई मठ बनाने की बात प्राप्त नहीं होती है, बौद्ध काल में हुआ भी तो उसके परिणाम में व्यभिचार बढ़ने लगा था, देशभर में घोर वामाचार सर्वत्र फैल गया था। स्वामी जी – मुझे एक बात समझ में नहीं आती कि एक ही चित्-सत्ता सर्वभूतों में विद्यमान है। इस सिद्धान्त के प्रतिपादक वेद ही जिस संस्कृति का मूलाधार हैं, उस देश में स्त्री व पुरुष में इतनी भिन्नता क्यों समझी जाती है? स्त्री निन्दको! तुमने स्त्रियों की उन्नति के लिए आज तक क्या किया? नियम-नीति में आबद्ध करके स्त्रियों को मात्र जनसंख्या की वृद्धि का यंत्र बना डाला। जगदम्बा की साक्षात् मूर्ति है भारत की नारी।

नारी निंदा मत करो, नारी नर की खान।
नारी से नर ऊपजे, ध्रुव प्रह्लाद समान॥

इनका उत्थान नहीं हुआ तो क्या तुम्हारा उत्थान कभी सम्भव है?

शिष्य – गुरुदेव! स्त्री जाति तो साक्षात् माया की मूर्ति है, जैसा कि रामचरितमानस में भी लिखा है –

"नारि विष्णु माया प्रकट"

मानो मनुष्य के अधःपतन के लिए ही स्त्री की सृष्टि हुई है, ऐसी स्थिति में क्या उन्हें भी ज्ञान-भक्ति का लाभ सम्भवहै?

स्वामी जी – किस शास्त्र में लिखा है कि स्त्रियाँ ज्ञान-भक्ति की अधिकारिणी नहीं हैं?

जिस समय भारत में ब्राह्मण-पण्डितों ने ब्राह्मणेतर जातियों को वेदपाठ का अनधिकारी घोषित किया, साथ ही स्त्रियों के भी सब अधिकार उस समय छीन लिये गये, अन्यथा वैदिक युग में देखो तो मैत्रेयी, गार्गी.....आदि ब्रह्मविचार में ऋषियों से कुछ कम नहीं रहीं हैं।

ना वेदविन्मनुते तं बृहन्तम्।

(तैत्तिरीय ब्राह्मण- ३/१२/९/७)

तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति यज्ञेन दानेन तपसानाशकेन।

(बृहदारण्यकोपनिषत्-४/१०/२२)

अर्थात् जिस प्रकार पुरुष ब्रह्मचारी रहकर तप व योग द्वारा ब्रह्मप्राप्ति करते थे, उसी प्रकार कितनी ही स्त्रियाँ ब्रह्मवादिनी ब्रह्मचारिणी हुई हैं।

सर्वाणि शास्त्राणि षडंग वेदान्,
काव्यादिकान् वेत्ति, परञ्च सर्वम्।
तन्नास्ति नोवेत्ति यदत्र बाला, तस्मादभूच्चित्र- पदं जनानाम्॥

(शंकर दिग्विजय ३/१६)

सभी शास्त्रों, अंगों सहित वेदों व काव्यों की ज्ञाता भारती-देवी से श्रेष्ठ कोई विदुषी नहीं थी।

अत्र सिद्धा शिवा नाम ब्राह्मणी वेद पारगा।
अधीत्य सकलान वेदान लेभेऽसंदेहमक्षयम॥

(महाभारत उद्योग पर्व १९०/१८)

वेदों में पारंगत शिवा नामक ब्राह्मणी ने सभी वेदों का अध्ययन कर मोक्ष प्राप्त किया।

सहस्त्र वेदज्ञ विप्र-सभा में गार्गी ने ब्रह्मज्ञानी याज्ञवल्क्य को शास्त्रार्थ के लिए आह्वान किया। इन सब आदर्श विदुषी स्त्रियों को जब उस समय अध्यात्म ज्ञान का अधिकार था तब आज क्यों नहीं?

श्री प्रह्लाद जी ने भी तो यही कहा –

"स्त्रीबालानां च मे यथा" (भा. ७/७/१७)

स्त्री हो अथवा बालक सबको मेरे समान ज्ञान प्राप्त हो सकता है।

भारत वर्ष की अवनति का कारण ही है – नारी शक्ति का विद्रोह रूप अपमान।

फिर मनु जी ने तो कहा है –

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाक्रियाः ॥

(मनु स्मृति-३/५६)

स्वामी जी की प्रबल इच्छा थी कि भारत की अविवाहित बालिकाओं के लिए ऐसा कोई मठ बने जहाँ उन्हें निःशुल्क आवास, भोजन व शस्त्रों तथा शास्त्रों की समुचित शिक्षा प्राप्त हो सके। जो चिर कौमार्य – वृत का पालन करने की इच्छा रखेंगी, उन्हें मठ की शिक्षिका तथा प्रचारिका बनाया जायेगा, जिससे वे देश-विदेश में जाकर नारी शक्ति को प्रबुद्ध कर सकेंगी। त्याग, संयम एवं सेवा ही उनके जीवन का व्रत होगा तब फिर से यह भूमि सीता, सावित्री और गार्गी से सज्जित हो सकेगी।

कुछ ब्रह्मवादिनियों के नाम इस प्रकार हैं –

ऋग्वेद की ऋषिकायें –

घोषा गोधा विश्ववारा, अपालोपनिषन्निषत्।
ब्रह्मजाया जुहूर्नाम अगस्त्यस्य स्वसादितिः ॥
इन्द्राणी चेन्द्रमाता च सरमा रोमशोर्वशी।
लोपामुद्रा च नद्यश्च यमी नारी च शश्वती ॥
श्रीर्लाक्षा सार्पराज्ञी वाक्श्रद्धा मेधा च दक्षिणा।
रात्री सूर्या च सावित्री ब्रह्मवादिन्य ईरिताः ॥

(बृहद्देवता २/८४, ८५, ८६)

घोषा, गोधा, विश्ववारा, अपाला, उपनिषद्, निषद्, ब्रह्मजाया (जुहू), अगस्त्य की भगिनी, अदिति, इन्द्राणी और इन्द्र की माता, सरमा, रोमशा, उर्वशी, लोपामुद्रा और नदियाँ, यमी, शश्वती, श्री, लाक्षा, सार्पराज्ञी, वाक्, श्रद्धा, मेधा, दक्षिणा, रात्री और सूर्या – सावित्री आदि सभी ब्रह्मवादिनी हुई हैं।

भूल गये, विदेहराज जनक की सभा में महर्षि याज्ञवल्क्य से ब्रह्मवादिनी वाचक्नवी का धर्म के गूढ़ तत्त्वों पर कैसा शास्त्रार्थ हुआ था।

वहाँ तो वाचक्नवी के स्त्री होने पर कोई बात नहीं उठायी गई है फिर आज स्त्री का प्रचारिका बनना, स्त्री का कथा कहना प्रश्नवाचक क्यों है?

आश्चर्य तो यह है कि ऐसे संकीर्ण विचारकों को ही अधिक विद्वान् कहा और समझा जाता है। इससे अधिक कदर्थना क्या होगी? वस्तुतः न वे धर्मज्ञ हैं, न ही धर्म प्रचारक, हाँ, धर्मध्वजी अवश्य हैं; जो भारतीय संस्कृति को स्वतन्त्र स्वदेश में ही पल्लवित होने में परिपन्थी बन रहे हैं

भारत व भारतीयता जिनका प्राण थी और वे स्वयं भारत के प्राण थे ऐसे महामना श्री मदनमोहन मालवीय जी, देश व धर्म का ऐसा कोई कार्य नहीं जिसमें श्री मालवीय जी के उदार हृदय ने भाग न लिया हो।

बात उस समय की है जब इन्हीं संकीर्ण विचारों के चलते कल्याणी नामक छात्रा को हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी में बहुत आग्रह करने पर भी वेद-कक्षा में प्रवेश प्राप्त नहीं हुआ। विद्वान् कहे जाने वाले संकीर्ण विचारकों का कथन था कि स्त्रियों को वेदाधिकार नहीं है। विवादों में एक ओर समर्थन था तो दूसरी ओर विरोध। समय व्यतीत होता रहा, निर्णय तक कोई नहीं पहुँच सका। अन्त में हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी ने धर्म प्राण मालवीय जी की अध्यक्षता व अनेकों गणमान्य विद्वानों की उपस्थिति में शास्त्रों के आधार पर विचार-विमर्श के उपरान्त यह निर्णय दिया –

"स्त्रियों को भी पुरुषों की भाँति वेदाधिकार है। २१ अगस्त सन् १९४६ को स्वयं महामना मालवीय जी ने इस निर्णय की घोषणा की। तदनुसार कुमारी कल्याणी को वेद-कक्षा में प्रवेश प्राप्त हुआ और विद्यालय में स्त्रियों के वेदाध्ययन पर किसी भी प्रकार का प्रतिबन्ध न रहने का निर्णय हुआ।

अब भी कोई दुराग्रह करे तो इसका कोई उपचार नहीं। लोकापवाद तो सीता जी के अग्नि-परीक्षा दिये जाने पर भी समाप्त न हो सका था किन्तु इतना अवश्य है, ऐसे हठ धर्मी धर्मप्रेमी तो कदापि नहीं किन्तु काष्ठ के घुन की भाँति धर्म को खोखला करने की पहल अवश्य कर रहे हैं।

स्त्री को कथा-वाचन का अधिकार

'रसीली ब्रजयात्रा, भाग – २' से संग्रहीत

संकलनकर्त्री- माधवीप्रियाजी, मानमन्दिर, बरसाना

श्रुतिः स्मृति उभे नेत्रे विप्राणां प्रकीर्तिते ।
एकेन विकलः काणः द्वाभ्यामन्धः प्रकीर्तितः ॥

(हारीत संहिता)

श्रुति व स्मृति का ज्ञान ही ब्राह्मण के दो नेत्र हैं, इनमें से यदि एक का भी ज्ञान नहीं है तो वह काना है और यदि दोनों के ही बोध से रहित है तो वह अन्धा है।

किन्तु भागवत धर्म वह मार्ग है जहाँ अन्धा भी स्खलन, पतन के भय से सर्वथा मुक्त होकर दौड़ सकता है।

योगेश्वर श्री कवि जी के वचन –

ये वै भगवता प्रोक्ता उपाया ह्यात्मलब्धये ।
अञ्जः पुंसामविदुषां विद्धि भागवतान् हि तान् ॥

(भा. ११/२/३४)

भोले-भाले अज्ञानी जन भी सुगमता से भगवत्प्राप्ति कर सकें, इसके लिये स्वयं श्री भगवान् ने अपने मुख से जो मार्ग बताया है, वही "भागवत धर्म" है। यह भागवत धर्म अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तो है ही, गोपनीय होने से स्वयं श्री भगवान् के मुख से ही प्रकट हुआ है, अन्यथा वर्णाश्रम धर्मों की भाँति मनु, याज्ञवल्क्य, पाराशर आदि स्मृतिकारों से भी प्रकट कराया जा सकता था।

यानास्थाय नरो राजन् न प्रमाद्येत कर्हिचित् ।
धावन् निमील्य वा नेत्रे न स्खलेन्न पतेदिह ॥

(भा. ११/२/३५)

सबसे प्रथम बात भागवत धर्म मनुष्य मात्र का धर्म है। यह इस धर्म की महत्ता है कि बड़े-बड़े विघ्न भी भागवतधर्मावलम्बी को चलायमान नहीं कर सकते हैं। यह वो सुगम राजपथ है, जिस पर अन्धाव्यक्ति भी
स्खलन-पतन के भय से मुक्त होकर दौड़ते हुए जा सकता है। नेत्रनिमीलन से तात्पर्य जिसे श्रुति-स्मृति दोनों का ही ज्ञान नहीं है, ऐसी स्थिति में उससे यदि किसी विधि-विधान का अतिक्रमण भी हो जायेगा तो भी दोष न लगकर उसे फलप्राप्ति ही होगी।

वेदोपनिषदां साराज्जाता भागवती कथा ।

(भा.माहा. २/६७) वेद-उपनिषद वृक्ष ठहरे और श्रीमद्भागवत गलित मधुर फल। फल की मधुरता, उपयोगिता को वृक्ष कभी प्राप्त नहीं कर सकता है। इसी कारण कहीं-कहीं स्मृतियों से विरोध भी देखा गया है। स्वयं श्री भगवान् ने किया – यथा स्मृति-ग्रन्थों में समुद्र यात्रा का निषेध किया गया है किन्तु भगवान् श्रीरामने समुद्र पार सेतु निर्माण कर समुद्र यात्रा की एवं भगवान् श्रीकृष्णने तो समुद्र में ही द्वारका का निर्माण कराके निवास किया। देश, काल परिस्थितियों के अनुसार स्वयं भगवान् ने भी स्मार्त-मर्यादा को स्वीकार नहीं किया (सभी धर्मों को छोड़कर 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज' मात्र वैष्णव धर्म का समर्थन किया)। धन्य है, यदि स्मार्त मर्यादा को मानकर सेतु निर्माण कर समुद्र यात्रा न करते तो पापिष्ठ रावण का वध कैसे होता? भगवान् श्रीकृष्ण यदि द्वारका का निर्माण करा समुद्र-निवास न करते तो दुष्ट कालयवन का वध कैसे होता? अतः धर्म को प्रधान रखते हुए, स्मार्त मर्यादा के विरुद्ध आचरण करते हुए भी भगवान् को देखा गया है।

तर्कोऽप्रतिष्ठः श्रुतयो विभिन्ना नैको ऋषिर्यस्य मतं प्रमाणम् ।
धर्मस्य तत्वं निहितं गुहायां महाजनो येन गतः सः पन्थाः ॥

(महाभारत, वन पर्व-३१३/११७)

तर्केऽप्रतिष्ठा श्रुतयो विभिन्नाः नासावृषिर्यस्य मतं न भिन्नम् ।
धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां महाजनो येन गतः स पन्थाः ॥

(गरुड़ पुराण-१, १०९.५१)

भारत के कट्टर स्मार्त लोग समुद्र पार करके देशान्तरों में सनातन धर्म का प्रचार करने नहीं गये अतः निरन्तर धर्म का संकुचन ही होता रहा। इसके विपरीत बौद्धों के द्वारा विदेशों में बौद्ध धर्म का व्यापक रूप से प्रचार-प्रसार हुआ। परिणाम में थाइलैण्ड, बर्मा आदि सम्पूर्ण मध्य एशिया बौद्धधर्मावलम्बी हो गया। कोई समय था, जब एक सनातन धर्म ही समग्र विश्व में था। हमारे पौराणिक इतिहास के अनुसार सातों द्वीप सनातनी थे। श्रीमद्भागवत के अनुसार-

अम्बरीषो महाभागः सप्तद्वीपवतीं महीम्। (भा. ९/४/१५)

सूर्यवंशी महाराज अम्बरीष सातों द्वीपों के सम्राट थे। जो परम कृष्ण भक्त थे (महाराज अम्बरीष की अनन्य कृष्णभक्ति ९/४/१८-२१ में दृष्टव्य है) अम्बरीष जी की ही भाँति उनकी सम्पूर्ण प्रजा (सप्तद्वीपों की प्रजा) भी

उत्तमश्लोक भगवान् श्री हरि की कथा प्रेम से श्रवण करती तो कभी गान करती, इसके अतिरिक्त प्रजाजनों को स्वर्ग की भी कोई इच्छा नहीं थी।

मध्यएशिया में बौद्ध धर्म के प्रचार से हानि यह हुई कि अहिंसा प्रधान बौद्ध धर्मावलंबियों पर अपनी क्रूरता, कट्टरता, हिंसा प्रधान वृत्ति के लिए कुख्यात यवनों ने धर्मान्तरण कराके उन्हें यवन बना डाला। भारत में क्या-क्या कहर बरसाया गया था।

क्रूरकर्मा फिरोजशाह तुगलक के समय में हिन्दू पुजारी व प्रचारकों को जीवित ही आग में फेंक दिया जाता था। बाबर का पूर्वज तैमूर लंग तो ९० हजार सैनिक लेकर मेरठ, हरिद्वार, शिवालिक, नगरकोट व जम्मू तक मन्दिरों-मूर्तियों का भंजन व इस्लाम न स्वीकार करने वाले हिन्दुओं का कत्लेआम करता रहा। बुद्धदेव नामक हिन्दू धर्म प्रचारक का मस्तक धड़ से अलग कर दिया था। सिक्खों के पंचम गुरू श्री अर्जुनदेव को क्या कम अमानुषिक यातनाएं दी गयीं, धधकते अंगारों पर बिठाया गया, ऊपर से जलती हुई बालू बरसाई गई, इतना ही नहीं, गाय की ताजी खाल खींचकर उसमें लपेटकर सिलने का उपक्रम भी किया गया और नवम गुरू श्री त्यागराय (तेग बहादुर) पर क्रूर मुगल औरंगजेब के अत्याचार आज भी हृदय में प्रतिकार की ज्वाला को भड़का देते हैं। लोहे के गर्म खंबे से चिपकाया जाना, जलती हुई बालू बरसाना और अन्त में धड़ से मस्तक अलग कर दिया जाना, क्या यह मनुष्यों का कार्य हो सकता है ? दशम गुरू गोविन्द सिंह के दो पुत्र जोरावरसिंह व फतेह सिंह को इस्लाम धर्म स्वीकार न करने पर जीवित ही दीवार में चिन दिया गया। कहाँ तक करें इन क्रूरों की असच्चर्चा, भारत भूमि के तो बलिदानियों की नामावली से ही एक नया ग्रन्थ बन सकता है। बौद्धों पर भी इन नरपिशाचों का कहर कुछ कम नहीं था। अभी कुछ समय पूर्व ही बामियान, मध्य एशिया में संसार की सबसे विशाल बुद्ध मूर्ति को तोड़ा गया और धर्मान्तरण की परम्परा तो अब तक जीवन्त है। संकीर्णताओं ने इतना दुर्बल कर दिया हिन्दू समाज को कि कश्मीर के महाराज ने घोषणा की, जिन हिन्दुओं का बलात् धर्मान्तरण करा मुसलमान बनाया गया है, वे पुनः हिन्दू धर्म स्वीकार कर सकते हैं किन्तु इस पर काशी के विद्वत्समाज ने ही विद्रोह खड़ा कर दिया कि अब उन्हें स्वीकार नहीं किया जायेगा। ऐसे वेदज्ञान से बहुत बड़ी हानि हुई इस राष्ट्र व धर्म की। भूल गये अपने ऋषियों का आचरण – (भविष्यपुराण ४/२१/१६)

सरस्वत्यज्ञया कण्वो मिश्र देशमुपाययो।
म्लेच्छान् संस्कृत्यं चाभाष्य तदा दश सहस्रकम्॥

सरस्वती की आज्ञा से महर्षि कण्व मिस्र देश गये और वहाँ दस हजार म्लेच्छों को उन्होंने सुसंस्कृत बनाया। जो शुद्ध व पवित्र होकर भारत लौटना चाहते थे उन्हें पुनः स्वीकार कर लिया गया। महाराष्ट्र के 'चित्पावन ब्राह्मण' आज महान वेदज्ञ माने जाते हैं, जो वंशानुगत यहूदी और मिस्र देश के आसपास से आये हुए हैं। इसी प्रकार ईरानी, शक, हूण, मग एवं यहूदी आदि अनेक जातियों ने हिन्दू संस्कृति को अपनाया और उन्हें ऋषियों द्वारा स्वीकार किया गया। स्मृति में भी स्त्री समर्थन – आज हठधर्मिता के कारण मनुष्य इतना अन्धा हो गया कि श्रुति-स्मृति धर्मों के सिद्धान्त भी यथार्थ रूप से न समझते हुए मात्र दुराग्रह में ही पड़ा हुआ है। ध्यान रहे, सबसे प्रमुख स्मृति शास्त्र तो श्रीमद्भगवद्गीता ही है। जहाँ स्वयं श्री भगवान् ने कहा है –

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्॥

(गी. ९/३२)

पापयोनि होते हुए भी स्त्री, वैश्य और शूद्र सर्वथा मेरे शरणागत होकर मुझे प्राप्त कर लेते हैं। कहाँ है स्मृति में स्त्रियों का बहिष्कार। स्मृति-शास्त्र का अन्तिम उद्घोष है

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

(गी. १८/६६)

सभी धर्मों को त्याग कर मेरे शरणागत हो जाओ। सर्वधर्मान् से वैदिक धर्म, श्रुति धर्म, स्मृति धर्म, सबका ग्रहण हो जाता है।